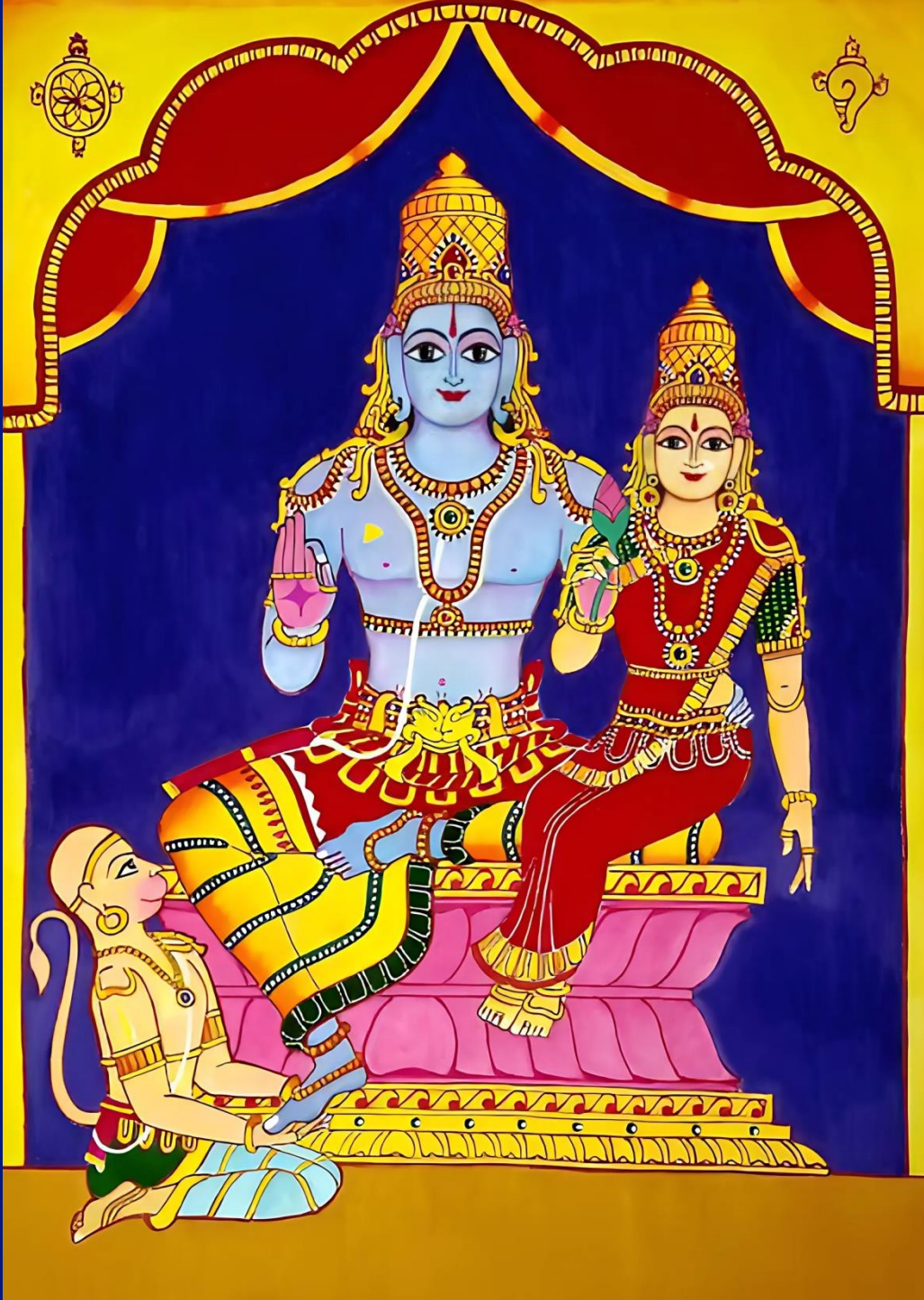


तत्त्ववादि वैष्णवा Handbook



अच्युता भक्ति
डीट्स

श्री नारायणाय नमः ।



अच्युता भक्ति
डीट्स

तत्त्ववादि वैष्णवा Handbook

(Hindi Edition)

लेखक: प्राज्ञा पट्टडा हरि कुमारा

© Copyrights Achyuta Bhakti Deets

© Copyrights 2022-26 Achyuta Bhakti Deets

Tattvavaadi Vaishnava Handbook - Hindi

लेखक: प्राज्ञा पट्टडा हरि कुमारा

पृष्ठों की संख्या: ९७

पहला प्रकाशन: २३ September २०२४

नवीनतम प्रकाशन: १ March २०२६

परिचय

येह किताब सारे माधवों और अन्य वैष्णवों को स्तोत्रों, मन्त्रों, श्लोकों और दूसरे पद्धतियों का संकलन है । हर वैष्णव को उनके नित्याचार मे लाभदायक होना इसका उद्देश है ।

इस किताब मे जो भी अच्युता भक्ति डीट्स का नहि है, जैसे कुछ चित्रों, वोह सब अपने मालिकों का है ।

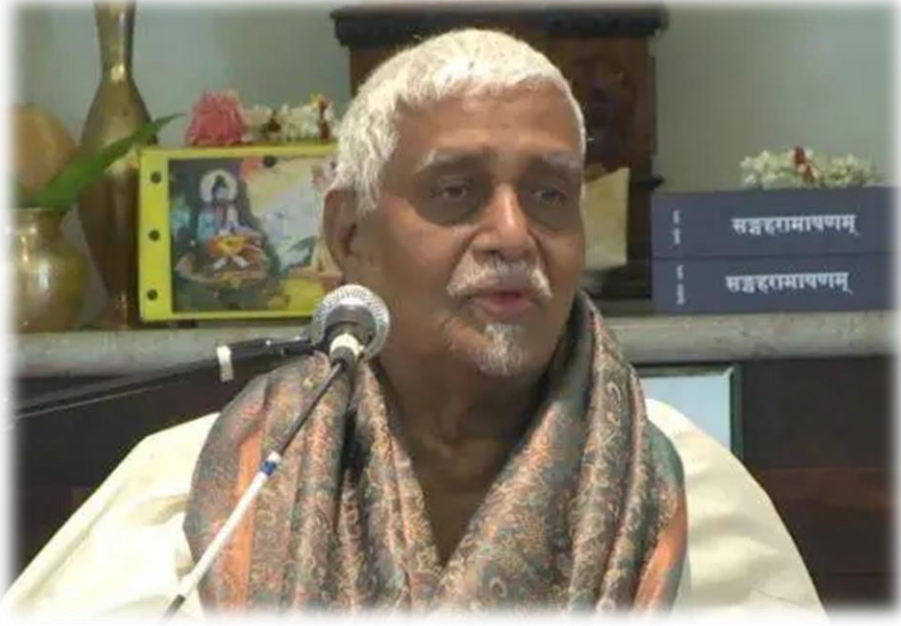
<https://bhaktideets.org>

<https://elib.bhaktideets.org>

Email: info@bhaktideets.org

© Copyrights 2022-26 Achyuta Bhakti Deets

आभार



येह किताब विद्वान श्री बन्नन्जे गोविन्दाचार्या केलिये श्रद्धांजलि है, जिनका सरल शास्त्रीय विवरणों का कारण, हम और बोहोत सारे लोग तत्त्ववाद सिद्धान्त तक पहुचे, और श्री मध्वाचार्य का श्रेष्ठता का पता लगा. इनका कारण, श्री मध्वाचार्य का द्वादशा स्तोत्रों का एक दुर्लभ पाठ भी मिलचुका है ।

हम श्रीमान अनन्ता श्री, श्रीमान प्रत्यर्थि गजाकेसरि, श्रीमान अभिनव और श्रीमान महासुदर्शना को धन्यवाद केहना चाते है, जिन्होने इस किताब का बोहोत मुख्य भागों को बनाने मे सहायता दिया है । श्री विजयेन्द्र आचार्य जी को प्रूफरीडिंग तथा अनेक संशोधनों के लिए विशेष धन्यवाद ।

लक्ष्मीलावण्यपीयूषपानपात्रायितेक्षणः ।

सनीरनीरदश्यामः पातु वो भगवान्हरिः ॥

“वोह भगवान हरि, जिनका आन्खे पात्र कि तरह लक्ष्मी देवि का चमक को पिता है, जिस्को काला बादल का वर्ण और अनन्त गुणों है, तुम्हारा रक्षा करे ।”

—श्री त्रिविक्रम पण्डिताचार्या का उशाहरण महाकाव्य

खण्डों

१. हरिनामा और नित्याचार का पद्धति	6
• ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक का धारण	12
• भोजन का अर्पण	14
• तुळसि का प्रयोग	16
• एकादशि का नियमों	18
• विविध श्लोकों	19
२. वैदिक सूक्तों और मन्त्रो	
• नारायणा उपनिषद्	28
• नारायणा सूक्त	30
• पुरुष सूक्त	32
• श्री सूक्त	38
• विष्णु सूक्ता	40
• देवि सूक्त	41
• मन्यु सूक्त	42
• बळित्था सूक्त	44
३. श्री मध्वाचार्या का द्वादशा स्तोत्रों	45
• श्री नृसिंह नखा स्तुति	52
४. श्री विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र	
• परिचय	64
• मूल पाठ/पूर्वपीठिका	66
• न्यास और ध्यान	68
• स्तोत्र	70
• उत्तरन्यास/उत्तरपीठिका	78
५. श्री विष्णु स्तुति	81
६. श्री हरिवायु स्तुति	82
७. श्री नारायण पण्डिताचार्या का श्री नरसिंह स्तुति	90
८. श्री महालक्ष्मी स्तुति	92
९. श्री शिव स्तुति	95
१०. श्री पूर्णबोध स्तोत्र	96

१. हरिनामा और नित्याचार का पद्धति



येह श्री विष्णु का नामों है, जिन्को मुख्य कार्यो और जप, सन्ध्यावन्दन और दूसरे मुख्य कार्यो से पेहले, उच्चारण करना चाहिये । किसि मन्त्र का जाप करने केलिये एक गुरुसे वोह मन्त्र का उपदेश होना चाहिये । भगवत नामा का उच्चारण और जाप करने का महत्व बोहोत बार शास्त्रों मे प्रशंसा किया गया है ।

**आर्ता विषण्णाशियिलाश्च भीता घोरेषु च व्याधिषु वर्तमानाः ।
सङ्कीर्त्य नारायणशब्दमात्रं विमुक्तदुःखाः सुखिनो भवन्ति ॥**

© Copyrights 2022-26 Achyuta Bhakti Deets

“जो लोग दुःख, कमजोरी, भय या रोगो मे है नारायणा शब्द का कीरतन करके हि उन्के दुःखसे मुक्त होकर सुखी बनते है ।”

—विष्णु सहस्रनाम का उत्तरपीठिका (श्री मधवाचार्यने कृष्णामृत महार्णव, श्लोक ६७मे; श्री वेदान्त देशिका ने रहस्यत्रयसारा, अध्याय २६मे उद्धरित किया है)

अवशेनापि यन्नाम्नि कीर्त्तिते सर्वपातकैः ।

पुमान् विमुच्यते सद्यः सिंहत्रस्तैर्मृगैरिव ॥ १९ ॥

“अनैच्छिक होतेहुए भी श्री हरि का नाम का उच्चारण करके व्यक्ति सारे पापों से मुक्त होता है, जैसे हि जानवरों शेर से डरते है ।”

— विष्णु पुराण, अंश ६, अध्याय ८, श्लोक १९ (श्री मधवाचार्यने कृष्णामृत महार्णव, श्लोक ६५मे; श्री वेदान्त देशिका ने रहस्यत्रयसारा, अध्याय २६मे उद्धरित किया है)

एतन्निर्विद्यमानानामिच्छतामकुतोभयम् ।

योगिनां नृप निर्णीतं हरेर्नामानुकीर्तनम् ॥ ११ ॥

“राजा, इस्स तरह श्री हरि का नम का उच्चारण करना मोक्ष प्राप्त करने का अवश्य उपाय कहा गया है जो (संसार का) भय से मुक्त होना चाते है और योगियों को ।”

—भागवत पुराण, स्कन्ध २, अध्याय १, श्लोक ११

द्विजो (जिनका उपनयन हो चुका है और ब्रह्मचर्य और दूसरे नित्यकर्मो कर्ते है) गुरु मन्त्र मे 'श्री गुरुभ्यो नमः' के बाद, और दूसरे मन्त्रो मे 'श्री' के बदले प्रणवा (ॐ) का उच्चारण करसक्ते है । अद्विजों को प्रणवा का उच्चारण करन उपयुक्त नहि है । उत्तम परिणाम केलिये अद्विजों (जिनका उपनयन नहि हुआ है) को प्रणव के बदले 'श्रीम्' केहना उपयुक्त है । कुछ शास्त्रों मे 'ओम्/ओं' का उपयोग किया गया है । इस्को भी उच्चारण सब लोग करसक्ते है ।

'नमः' केहना सम्मान करने का एक तरीका है । 'मः' का मतलब 'मै' याह अपने आप होता है । 'न' का मल्लब 'नहि' है । अपने व्यक्तित्व को भूल कर किसि और का सम्मान करने केलिये 'नमः' कहा जाता है । इसिलिये इस्को भगवान, देवताओं, गुरुओं और दुसरे अधिकारियों केलिये इस्थमाल किया जाता है ।

श्री नारायणाय नमः ।

श्री नारायणको नमस्कार ।

श्री हरये नमः ।

श्री हरिको नमस्कार ।

श्री कृष्णाय नमः ।

श्री कृष्णको नमस्कार ।

श्री विष्णवे नमः ।

श्री विष्णुको नमस्कार ।

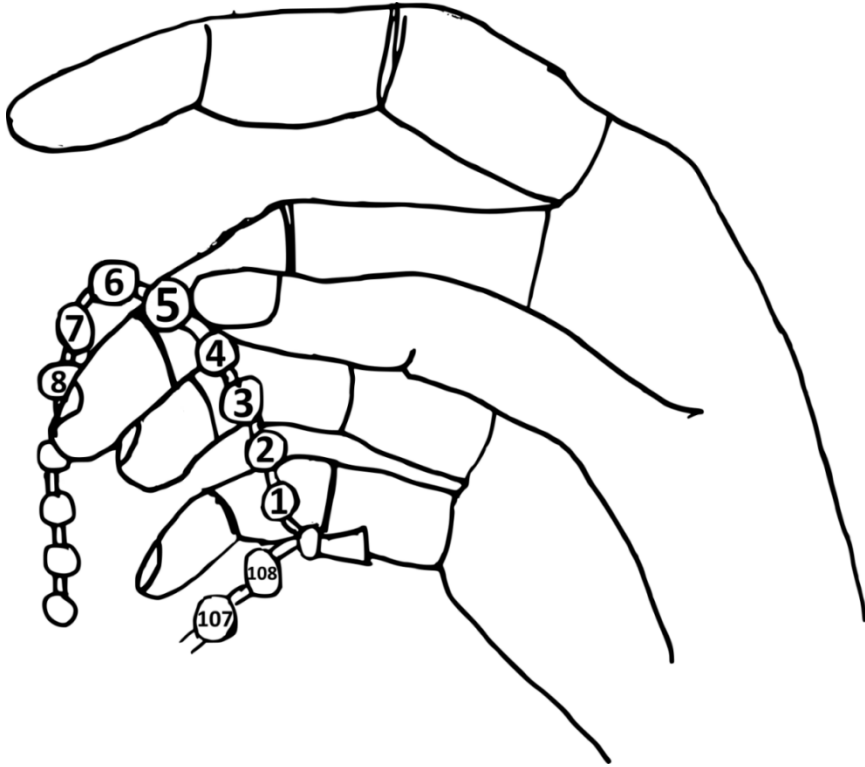
**कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने ।
प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः ॥**

“कृष्णा, वासुदेवा, हरि, परमात्मा, अपना भक्तो का कष्टों का विनाशक, गोविन्दा, को नमस्कार और नमस्कार ।”

—भागवत पुराण, स्कन्ध १०, अध्याय ७०, श्लोक १६

इन वाक्यों को मुख्य कार्यो याह सधनों से पेहले उच्चारण किया जाता है । इस्को "गुरु मन्त्र" कहा जाता है । इस्को 'श्री हरिवायुगुरुभ्यो नमः' (श्री हरि, वायु और गुरुओं को नमस्कार) से भी शुरु किया जा सकता है । जो दीक्षित वैष्णवों होते है और जिन्को मन्त्रोपदेश हो चुका है, जाप से पेहले भी येह गुरु मन्त्र का उच्चारण करना चाहिये ।

देवता के ऊपर ध्यान से एक मन्त्र याह श्लोक का उच्चारण करने का कार्य को जाप कहा जाता है । नित्य साधना मे इस्को किया जाता है । इस्के लिये तुळसि याह नीम से तयार हुए मणियों से किया जाता है । बिना मणियों से भी जाप किया जासकता है, लेकिन मणियो कि वजह से जाप का सन्ख्या को याद रखना ज़रूरि नहि होंगा । मणियों को इस चित्रमे दिखाय गया तरह पकडना चाहिये और एक बार मन्त्र को बोलने के बाद, अगिला मणिपे उडगलि को रखना चाहिये । इस तरह १०८ याह जितना बार जाप करना है, मन्त्र को बोलना चाहिये ।



मन्त्र याह श्लोक का उपदेश को गुरु से लेना चाहिये और उसके बाद, नित्य जाप करना है । जाप केलिये गुरु से उपदेश लेना ज़रूरि है और इस्के बिना सिर्फ़ कुछ वाक्यों का हि उच्चारण किया जासकता है, लेकिन उनका जाप नहि । आम तौर पर, जाप १०८ बार किया जाता है । येह संख्या १०,८०० से व्युत्पन्न हुआ है । एक दिन मे इन्सान २१,६०० बार साँस लेता है और हर क्षण परमात्मा का

ध्यान करना ज़रूर है । अन्य कार्योंमे जाने वाला समय को चोड कर, १०,८०० बार जाप करना है । लेकिन इस्को सामन्य मनुष्यो नहि कर पायेगे । इसीलिये, १०८ का संख्या बताया गया है । मन्त्रों या श्लोकों का जाप १०, ११, ३, २४ याह ३२ बार भी किया जा सकता है । जाप करने का तीन रूपों है: वाचिक (मूह से मन्त्र का उच्चारण करना) उपांशु (धीरे से उच्चारण करना) और मानसिक (मन मे हि मन्त्र का उच्चारण करना) । पिछले विधियों से अगला वालों श्रेष्ठ माना जाते है ।

(ॐ) श्रीगुरुभ्यो नमः । श्रीपरमगुरुभ्यो नमः । श्री आदिगुरुभ्यो नमः । श्रीमूलगुरुभ्यो नमः । श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्येभ्यो नमः । श्रीवेदव्यासाय नमः । श्रीभारत्यै नमः । श्रीसरस्वत्यै नमः । श्रीवायवे नमः । श्रीब्रह्मणे नमः । श्रीमहालक्ष्म्यै नमः । श्रीनारायणाय नमः । श्री हरये नमः । मोक्षप्रदश्रीवासुदेवाय नमः ।

“गुरुओं को नमस्कार । परमगुरुओं को नमस्कार । आदिगुरुओं को नमस्कार । श्रीमत आनन्दा तीर्था भगवत्पादा आचार्य को नमस्कार । श्री वेदव्यासा को नमस्कार । श्री भारती देवि को नमस्कार । श्री सरस्वती देवि को को नमस्कार । श्री वायु को नमस्कार । श्री ब्रह्मा को नमस्कार । श्री महालक्ष्मी देवि को नमस्कार । श्री नारायणा को नमस्कार । श्री हरि को नमस्कार । मोक्ष का दाता श्री वासुदेवा को नमस्कार ।”

शोडशाक्षरि मन्त्रः

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

**नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥ १ ॥**

**नारायणं सुरगुरुं जगदेकनाथं भक्तप्रियं सकललोकनमस्कृतं च ।
त्रैगुण्यवर्जितमजं विभुमाद्यमीशं वन्दे भवघ्नममरासुरसिद्धवन्द्यम् ॥ २ ॥**

“नारायण, नर (अर्जुन), नरोत्तम (भीम), देवि (लक्ष्मी देवि), सरस्वती (भारती देवि) और व्यासा को नमस्कार करके हि जया (महाभारत) को बोलना चाहिये । नारायणा को नमस्कार हरता हू जो सुरों का गुरु है, जगत का एक नाथ, अपना भक्तो को प्रिय, जिस्को सब लोक नमस्कार करते है, त्रिगुणों (सत्त्व, रजस और तमस) से अधिक, अजन्मा, अनन्त, प्राचीन और ईशा है, संसार से मुक्ति देता है और जिस्को देवताएं और मुक्त जीवों नमस्कार करते है ।”

—महाभारत, आदि पर्व, अध्याय १, श्लोकों १-२ (श्री मध्वाचार्यने महाभारत तात्पर्य निर्णय, अध्याय २, श्लोक ५८मे उद्धरित किया है; श्लोक १ भागवत पुराण, स्कन्ध १, अध्याय २, श्लोक ४ मे भी है)

**अविकाराय शुद्धाय नित्याय परमात्मने ।
सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्वजिष्णवे ॥ १ ॥**

**नमो हिरण्यगर्भाय हरये शङ्कराय च ।
वासुदेवाय ताराय सर्गस्थित्यन्तकारिणे ॥ २ ॥**

एकानेकस्वरूपाय स्थूलसूक्ष्मात्मने नमः ।
अव्यक्तव्यक्तरूपाय विष्णवे मुक्तिहेतवे ॥ ३ ॥

सर्गस्थितिविनाशानां जगतोऽस्य जगन्मयः ।
मूलभूतो नमस्तस्मै विष्णवे परमात्मने ॥ ४ ॥

“अविकार, शुद्ध, शाश्वत परमात्मा को जो सदा एक रूप का है, श्री विष्णु को जो सब का विनाशक है, जो हिरण्यगर्भा, हरि और शङ्कर है, वासुदेव को जो संसार से जीवों को निकलवाता है और जगत का सृष्टि, स्थिति और अन्त का कारण को नमस्कार । जिसका स्वरूप एक और अनेक भी है, जिसका आत्मा स्थूल और सूक्ष्म भी है, जो अव्यक्त है और व्यक्त भी है, श्री विष्णु को नमस्कार, जो मुक्ति का कारण है । जगत का सृष्टि, स्थिति और विनाश का कारण जो जगत को धारण करता है और उसका मूलभूत है – वोह श्री विष्णु, परमात्मा को नमस्कार ।”

—विष्णु पुराण, अंश १, अध्याय २, श्लोक १-४

ध्याना श्लोकों:

प्रसन्नवदनं चारुपद्मपत्रोपमेक्षणम् ।
सुकपोलं सुविस्तीर्णललाटफलकोज्ज्वलम् ॥ ७९ ॥

समकर्णान्तविन्यस्य चारुकुण्डलभूषणम् ।
कंबुग्रीवं सुविस्तीर्णश्रीवत्साङ्कितवक्षसम् ॥ ८० ॥

वलित्रिभङ्गिना मग्ननाभिना ह्युदरेण च ।
प्रलम्बाष्टभुजं विष्णुमथवापि चतुर्भुजम् ॥ ८१ ॥

समस्थितोरुजङ्घञ्च सुस्थिताङ्घ्रिवराम्बुजम् ।
चिन्तयेद्ब्रह्मभूतं तं पीतनिर्मलवाससम् ॥ ८२ ॥

किरीटहारकेयूरकटकादिविभूषितम् ।
शार्ङ्गशङ्खगदाखड्गचक्राक्षवलयान्वितम् ।
वरदाभयहस्तं च मुद्रि कारत्नभूषितम् ॥ ८३ ॥

“प्रसन्न मुख, कमल का पत्ताएं जैसा सुन्दर आँखें, चिकने गाल, चौड़ा माथा, एक ही आकार का कानों जिनमे सुन्दर कुण्डल है, पतली गर्दन, चौड़ी छाती जिसमे श्रीवत्सा प्रतीक है, तीन परतों का पेट, गहरी नाभि, आठ याह चार हाथें, ठीकसे स्थित जाँघें और कमल जैसा पादों – इस्स रूपमे, जो ब्रह्म भूत है और निर्मल पीत वस्त्र धारण किया है, विष्णु का चिन्तन करना है, जिसे सुन्दार मुकुट, हारों कंगन और बाकि आभूषण धारण किया है, जिसके साथ धनुष, शङ्ख, गदा, तलवार, मनकाएं, पद्म और बाण है । उसका हाथ, रत्नों से भूषित है और वरदा और अभय मुद्रों मे है ।”

—विष्णु पुराण अंश ६ अध्याय ७ श्लोकों ७९-८३

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥

© Copyrights 2022-26 Achyuta Bhakti Deets

“शान्त रूप, साँप का शय्या होकर, नाभि मे पद्म, सुरेश, विश्व का धारक, आकाश कि तरह सर्वव्यापि, बादल का वर्ण, जिसका हर अङ्ग शुभ है, लक्ष्मी का पति, कमल कि तरह आँखे, योगियों का ध्यान का गति – विष्णु, भय का नाशक और सारे लोकों का नाथ, को नमस्कार करता हू ।”

—विष्णु सहस्रनाम का ध्यान श्लोक

पूजा के बाद याह अपने आप को सुद्ध करने किलिये, श्री विष्णु का तीन नामों (अच्युता, अनन्ता और गोविन्दा) को बोलना चाहिये । श्री विजयीन्द्र तीर्था ने न्यायमौक्तिकमाला मे पद्म पुराण से इस श्लोक को उद्धृत किया है, जहा श्री रुद्र देव श्री विष्णु का इन नामों का महत्व बताता है और येह भी कि उसने हालहला विष को पीने से पेहले इन नामों का उच्चारण किया ।

नामत्रयप्रभावाच्च विष्णोस्सर्वगतस्य वै ।

विषं तदभवज्जीर्णं लोकसंहारकारणम् ॥

“सर्वव्यापि श्री विष्णु का येह तीन नामों (अच्युता, अनन्ता और गोविन्दा) का उच्चारण करनेसे, वोह (हालहला) विष जोह सारे लोकों को नष्ट करनेवाला था, उसको मेने जीर्णित किया ।”

—पद्म पुराण, उत्तर खण्ड, अध्याय २३२, श्लोक १८

(ॐ) अच्युताय नमः । (ॐ) अनन्ताय नमः । (ॐ) गोविन्दाय नमः ।

“अच्युता को नमस्कार । अनन्ता को नमस्कार । गोविन्दा को नमस्कार ।”

ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक का धारण

ऊर्ध्व पुण्ड्र का मल्लब है ऊपर का निषान । यह दो रेखों और उनके बीच अंतर होने वाला तिलक है, जिस्को हर वैष्णव धारण करना चाहिये । यह नाख के ऊपर का नोक से केश तक जाना चाहिये । यह एक इन्सान का शरीर का शक्तियों का लक्षण है, जिन्को "चक्रो" कहा जाता है । सामान्य स्तिथि मे अध्यात्मिक शक्तियों पीठ के नीचे होते है । इस्को परमात्मा का ध्यान से ऊपर ब्रह्मरन्ध्र (सर के ऊपर का एक बन्द हुआ रन्ध्र) तक लेजाना है । ऐसे हि, नाक के मध्ये मे दोनो भौं के बीच, परमात्मा का ऊपर ध्यान करने का एक स्तळ है ।

तिलक का दोनो रेखों के बीच का अन्तर श्री विष्णु का रेहने का स्थळ है । ऊर्ध्वपुण्ड्र को बोहोत वस्तुओं से लगा जासकता है, जैसे पानि से भी । सामान्य स्तिथिमे, "गोपि चन्दन" नाम का एक तरह का मिट्टीसे तिलक धारण किया जाता है, जो पवित्र है और द्वारका के पास मिलता है ।

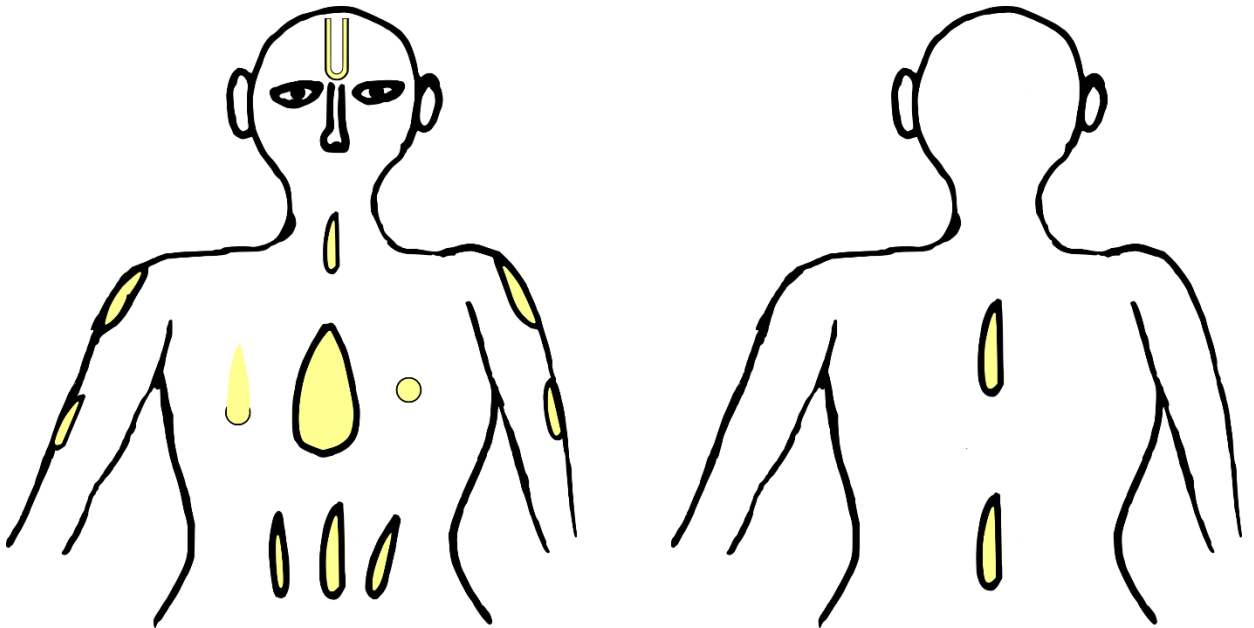
गोपि चन्दन को पानि मिलाके उसका तिलक को धारण करते हुए, यह श्लोक को बोलना चाहिये ।

**गोपीचन्दन पापघ्न विष्णुदेहसमुद्भव ।
चक्राङ्कित नमस्तुभ्यं धारणान्मुक्तिदो भव ॥**

"पापनाशक गोपि चन्दन जो श्री विष्णु के शरीर से उत्पन्न हुआ है और चक्र का प्रतीक है – तुझे नमस्कार, जिस्को धारण करके मोक्ष दाता बनेग ।"

—वासुदेवा उपनिषद

अपने दायां हाथ का बीच की उँगलीसे तिलक को धारण करो और थोडा दबाकर दोनो रेखों के बीच अन्तर बनेगा । नाक का ऊपर का नोक से डलते वक्त, उँगली को ऊपर केश तक लेजायिये और थोडा दबाकर अन्तर बनायिये ।



ऊर्ध्व पुण्ड्र को शरीर के १२ अङ्गों पे डलने से उसको द्वादशा ऊर्ध्वपुण्ड्र कहा जाता है । इसको धारण करते हुए, श्री विष्णु का इन बारह नामों को बोलना चाहिये । तलक को इस चित्र मे दिखाया गया हुआ रूप मे धारण करना है ।

देह का अङ्ग	आकार	लम्बाई (अनुपात)	तिलक लगाने का मन्त्र	
			शुक्ल पक्ष	कृष्ण पक्ष
सर के ऊपर	बांस का पत्ता	४	श्री वासुदेवाय नमः ।	
ललाट	बांस का पत्ता	४	श्री केशवाय नमः ।	श्री सङ्कर्षणाय नमः ।
पेट	दीपक की लौ	८	श्री नारायणाय नमः ।	श्री वासुदेवाय नमः ।
छाती	कमल पंखुड़ी	८	श्री माधवाय नमः ।	श्री प्रद्युम्नाय नमः ।
गला	जम्बु फल	४	श्री गोविन्दाय नमः ।	श्री अनिरुद्धाय नमः ।
पेट का दाहिनी ओर	दीपक की लौ	८	श्री विष्णवे नमः ।	श्री पुरुषोत्तमाय नमः ।
दायां हाथ	बांस का पत्ता	८	श्री मधुसूदनाय नमः ।	श्री अधोक्षजाय नमः ।
दायां कंधा	जम्बु फल	४	श्री त्रिविक्रमाय नमः ।	श्री नारसिंहाय नमः ।
पेट का बायां ओर	दीपक की लौ	८	श्री वामनाय नमः ।	श्री अच्युताय नमः ।
बायां हाथ	बांस का पत्ता	८	श्री श्रीधराय नमः ।	श्री जनार्दनाय नमः ।
बायां कंधा	जम्बु फल	४	श्री हृषीकेशाय नमः ।	श्री उपेन्द्राय नमः ।
पीठ के निचले हिस्से	जम्बु फल	८	श्री पद्मनाभाय नमः ।	श्री हरये नमः ।
पीठ के ऊपर हिस्से	जम्बु फल	४	श्री दामोदराय नमः ।	श्री कृष्णाय नमः ।
छाती का दायां ओर	रेखा और चक्र	२	श्री श्रीवत्साय नमः ।	
छाती का बायां ओर	चक्र	१	श्री कौस्तुभाय नमः ।	
सर के ऊपर	बांस का पत्ता	४	श्री वासुदेवाय नमः ।	

तिलक को लगाने का शुरु में और अन्त में सर के ऊपर, ब्रह्मरन्ध्र पे, तिलक लगाकर, 'श्री वासुदेवाय नमः' बोलना चाहिए । जब भी संभव हो तिलक को कम से कम ललाटपे पर लगाना चाहिए ।

शङ्ख और चक्र का मुद्रों को गोपी चन्दन से मुख का दाय और बायपे धारण करने केलिये, येह श्लोकों को बोलना चाहिये ।

शङ्ख मुद्रः

पाञ्चजन्य निजध्वान ध्वस्तपातक संचय ।
त्राहिमां पापिनां घोरसंसारार्णव पातिनं ॥

चक्र मुद्रः

सुदर्शन महाज्वाल कोटिसूर्यसमप्रभ ।
अज्ञानांधस्य मे नित्यं विष्णोर्मार्गं प्रदर्शय ॥

भोजन का अर्पण

भोजन करते समय, उसे खाने से होने वाले बुरे प्रभावों और पाप कर्मों का नाश करने के लिए, श्री हरि को नैवेद्य अवश्य अर्पित करना चाहिए । भोजन करने से पहले भगवान को भोजन अर्पित करने की सबसे बुनियादी विधि है, 'श्रीकृष्णार्पणमस्तु' (यह श्री कृष्ण के लिए अर्पण बन जाए का (उच्चारण करना और भोजन करते समय मन में 'गोविन्दा' का उच्चारण करना, या 'श्री वैश्वानराय नमः' का उच्चारण करना, जिसमें श्री विष्णु को आत्मा का अंतर्दामी मानकर उसका भोक्ता माना जाता है । निम्नलिखित श्लोक का उच्चारण करना चाहिए:

**ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ २४ ॥**

“ब्रह्म ही अर्पण करने का कार्य है, ब्रह्म ही आहुति है, ब्रह्म ही ब्रह्म द्वारा अग्नि में आहुति दी जाती है । ब्रह्म ही वह लक्ष्य है जिसे वे प्राप्त कर सकते हैं जिनके कर्म पूर्णतः ब्रह्म में लीन हैं ।”

—भगवत गीता, अध्याय ४, श्लोक २४

इसके अतिरिक्त भोजन से पहले या बाद में विष्णु सहस्रनाम की पूर्वपीठिका (श्लोक १० से १३) में भीष्म द्वारा रचित स्तुति या विष्णु सहस्रनाम के १६वें श्लोक का उच्चारण किया जा सकता है ।

**भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः ।
अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः ॥ १६ ॥**

वैष्णव को आदर्श रूप से केवल सात्विक भोजन ही खाना चाहिए, सभी निषिद्ध खाद्य पदार्थों से परहेज करना चाहिए । मांस, शराब, ड्रमस्टिक, मशरूम, बैंगन और मूली सभी वैष्णवों के लिए सख्त वर्जित हैं, साथ ही अन्य निषिद्ध खाद्य पदार्थ, जो स्वभाव से राजसिक या तामसिक हैं । पहले बताए गए खाद्य पदार्थ सबसे अधिक वर्जित हैं और इनका सेवन किसी को द्विज या वैष्णव होने से अयोग्य बनाता है । उडुपी क्षेत्र में उपलब्ध बैंगन की एक किस्म जिसे “मत्तु गुल्ला” या “वादीराजा गुल्ला” के नाम से जाना जाता है, वोह सात्विक है और इसका सेवन किया जा सकता है ।

आदर्श नैवेद्यः

- भोजन को शुद्ध मन से वैष्णव द्वारा पकाया जाना चाहिए ।
- भोजन का अर्पण करने से पहले सूंघना, देखना और चखना नहि चाहिए ।
- यदि सुगंध की आवश्यकता हो तो खाना पकाने वाला व्यक्ति मानसिक रूप से लक्ष्मी देवी का अनुष्ठान कर सकता है ।
- स्टील या चीनी मिट्टी की प्लेटों में नहीं परोसा जाना चाहिए ।

फर्श पर उंगली से एक छोटा सा चौकोर मंडल बनाएं, उसे पानी में डुबोएं और उस पर नैवेद्य वाली थाली रखें ।

श्रीः

फिर अपने हाथ में कुछ तुलसी के पत्ते और थोड़ा पानी लेकर उसे थाली के चारों ओर घुमाते हुए कहें 'श्रीभारतीशांतर्गत नैवेद्यं समर्पयामि' । थाली में तुलसी के पत्ते रखें और कुछ मिनट के लिए अपनी आंखें बंद कीजिये । फिर भोजन लें, उसे एक बर्तन में रखें और परोसें ।

तुळसि का प्रयोग

तुळसि पौधा श्री विष्णु का पूजा मे बोहोत मुख्य है । तुळसि पौधो मे लक्ष्मी देवि का आवेश होता है, जोह तुळसि देवि है । पुराणो मे बताया गया है कि किसि भी नैवेद्य या पूजा को पूर्ण बनाने केलिये, तुळसि का प्रयोग मुख्य है ।

तुळसि पौधा कि वजह से गर्ह मे शुभ होता है और दुर्घटनों दूर होते है । इसीलिये कहा गया है:

मन्दारकुन्दकुरबोत्पलचम्पकार्णपुत्रागनागबकुलाम्बुजपारिजाताः ।

गन्धेऽर्चिते तुलसिकाभरणेन तस्या यस्मिंस्तपः सुमनसो बहु मानयन्ति ॥ १९ ॥

“मन्दरा, कुन्दा, कुरुबका, उत्पला, चंपक, अरण, पुत्रगा, नागकेशर, बकुल, अंबुजा और पारिजाता सुगंधित पौधाएं है, लेकिन वोह भी तुळसि को हि श्रेष्ठ केहते है, जिसका पूजा किया जाता है और उसका पत्ताएं मालों मे इस्तेमाल किया जाता है, उस्कि तपस और शुद्ध मनस का कारणसे ।”

—भागवत पुराण, स्कन्ध ३, अध्याय १५, श्लोक १९

तुळसि पौधा के पास, इस श्लोक को बोल कर तुळसि देवि को नमस्कार कीजिये:

**मनः प्रसादजननी सुखसौभाग्य वर्धनी ।
आधिव्याधिं च हरमे तुळसि त्वां नमाम्यहम् ॥**

“मन का प्रसाद का जननी, सुख और सौभाग्य देनेवाला और व्याधियों को नष्ट करने वाला तुळसि – तुम को मे नमस्कार करता हु ।”

**यन्मूले सर्वतीर्थानि यन्मध्ये सर्वदेवताः ।
यदग्रे सर्ववेदाश्च तुळसि त्वां नमाम्यहम् ॥**

“हे तुलसी, जिनकी जड़ों में समस्त तीर्थ स्थित हैं, जिनके मध्य में समस्त देवता निवास करते हैं और जिनके अग्रभागों में समस्त वेद स्थित हैं – आपको मैं सादर प्रणाम करता हूँ ।”

तुळसि पत्ताएं को उठाते वक्त इस श्लोक को बोलिये:

**तुळस्यमृतजन्मासि सदा त्वं केशवप्रिया ।
केशवार्थं चिनोमि त्वां वरदा भव शोभने ॥**

“हे अमृतसे जन्म लेने वाली तुळसि, तुम सदा केशव के लिये प्रिया हो । केशवा के लिये मे तुम्हारा पत्तों को लेरहा हू । अपना आशिर्वाद दो ।”

—पद्म पुराण, सृष्टि खण्ड, अध्याय ६१, श्लोक १२

नियमों:

- एक बार सिरफ़ पत्ता को हि उठान चाहिये
- सवधानिसे पत्ताएं को बिना औजार उठान चाहिये
- पत्ताएं को सिरफ़ दिनमे हि उठान चाहिये, सूर्योदय से सूर्यास्त के समय तक हि

- तुळसी के पत्ते केवल शनिवार, सोमवार, बुधवार और गुरुवार को ही तोड़े जा सकते हैं ।
- द्वादशि, पूर्णिमा और अमावस्या के दिन पत्ताएं को उठान मना है ।
- दांया हाथसे पत्ताएं को उठान चाहिये और बायां हाथसे शाखा को पकडना चाहिये

एकादशि का नियमों

हर पखवाड़ा का ११ दिन, शुक्ल पक्ष में या कृष्ण पक्ष में, "एकादशि" कहा जाता है। यह हर वर्षावा केलिये बोहोत मुख्य है और उपवास करना अनिवार्य है, जब वोह निरोग है। जब पन्चाङ्ग में एकादशि का तिथि शुरू होता है, उपवास का व्रत भी शुरू करना है और समाप्त एकादशि का समाप्त होने पर होता है। शास्त्रों में बोहोत बार इसका महत्व बताया गया है और इससे पेट को आराम मिलता है और आरोग्य बडता है। आदर्श रूप में, उपवास निर्जला होना चाहिये, यानि पानि के भी बिना। लेकिन इसको अनुभवहीन लोग नहि करना चाहिये। सालों से उपवास करके करके हि अनुभव से निर्जला उपवास करने का क्षमता प्राप्त हो सकता है। व्रत को सहि समय पर समाप्त करना भी मुख्य है, जब अगला दिन का सूर्योदय हो चुका है और द्वादशि का तिथि समाप्त होने से पेहले, जिस्को "पारण" कहा जाता है। अन्यथा आरोग्य को हानि हो सकता है और व्रत का पुण्य भी खो जायेगा। पानि को भी पी कर इसको किया जासकता है। पन्चाङ्ग के अनुसार पारण का समय देखना चाहिये। भागवत पुराण में महाराज अंबरीश भी यहि करता है, जब दुर्वास मुनि उनका अथिति थे और उन्होने अपना भोजन आरंभ नहि किया था।

अगर एकादशि का तिथि सूर्योदय से २ मुहूर्तों (४ घटिकाएं) पेहले शुरू होता है, तोह उसको "संपूर्ण एकादशि" कहा जाता है। वोह दिन उपवास करना चाहिये। एक घटिका २४ मिनट होता है और २ मुहूर्तों १ घन्टा ३६ मिनट होता है। अगर एकादशि का तिथि सूर्योदय से २ मुहूर्तों पेहले शुरू नहि हुअ और दशमि का तिथि कुच देर और चला, तोह उपवास को द्वादशि के दिन करना है और पारण को उसके अगला दिन, त्रयोदशि। उदाहरण, अगर दशमि तिथि ३१ July के सुबह, सूर्योदय के बाद खतम होता है और एकादशि वहि दिन शुरू होता है, उपवास को १ August करना चाहिये।

शुरुआती लोग हल्का भोजन, फल और पानी लेकर शुरुआत कर सकते हैं, जबकि हर एकादशी पर धीरे-धीरे भोजन छोड़ना चाहिए। व्यक्ति को आदर्श स्थिति में भी रहना चाहिए और उपवास के कारण उत्पादकता से समझौता नहीं करना चाहिए। एकादशी पर अतिरिक्त जप, शास्त्रों का पाठ आदि करने की सलाह दी जाती है। बालों में कंघी करने, खुद को स्टाइल करने (विशेष रूप से दर्पण के सामने), दांत साफ करने आदि नहि करना चाहिए।

विविध श्लोकों

येह श्लोकों को दिनमे करने वाले कार्योके बिच बोलना चाहिये ।

सुबह उटने पे:

(उटने के बाद, श्री नारायणा का नाम कुच बार बोलिये)

कराग्रे वसते लक्ष्मी करमध्ये सरस्वती ।
करमूले तु गोविन्दः प्रभाते करदर्शनम् ॥

“लक्ष्मि देवि हाथ उंगली की नोक पे रहती है, सरस्वति देवि हाथ के मध्य मे और गोविन्दा हाथ के मूल पे । इस्को सुबह देखिये ।”

सुबह उटकर ज़मीन चूने से पहले:

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नी नमस्तुभ्यं पादस्पर्श क्षमस्वमे ॥

“हे देवि, जिनका वस्त्रों समुद्र है और छाति पर्वतो, तुम्को नमस्कार, श्री विष्णु का पत्नी । तुम्को मेरे पैर से चूने केलिये क्षमा करो ।”

स्नान करते हुए:

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥

“गङ्गा, यमुना, गोदावरि, सरस्वति, नर्मदा, सिन्धु और कावेरि, अपना उपस्थिति इस्स पानि मे बनायिये ।”

समुद्र मे स्नान करने पे:

अपामधिपतिस्त्वं च तीर्थेषु वसतिस्तव ।
वरुणाय नमस्तुभ्यं स्नानानुज्ञां प्रयच्छ मे ॥

“पानि का अधिकारि जो हर तीर्थमे रहते हो – तुझे नमस्कार, वरुणा । मुझे स्नान करने कि अनुमति दो ।”

अपने आप को पवित्र बनाने केलिये, मुख्य पुजाओं से पेहले याह जब स्नान करना असंभव हो:

अपवित्रः पवित्रोवा सर्वावस्थां गतोऽपिवा ।
यस्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरश्शुचिः ॥

“अपवित्र या पवित्र, किसि भी स्तिथि और गति मे, जो पुण्डरीकाक्षा को याद करेगा, वोह बाहर और अन्दर से शुद्ध हो जायेगा ।”

घर से बाहार जाते समय:

अग्रतो नारसिंहश्च पृष्ठतो गोपनन्दनः ।
उभयोः पार्श्वयोरास्तां सशरौ रामलक्ष्मणौ ॥

“नरसिंह ऊपर है, गोपिनन्दन पीचे है । पासमे, बाणों को लेकर, राम और लक्ष्मण है ।”

सफ़र का समय:

कुङ्कुमाङ्कितवर्णाय कुन्देन्दुधवलाय च ।
विष्णुवाह नमस्तुभ्यं पक्षिराजाय ते नमः ॥

“कुङ्कुम का वर्ण और धवल रोशन, विष्णु का वाहन, तुम्हे नमस्कार, पक्षिराजा, तुझे नमस्कार ।”

तीर्था लेते हुए:

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिनिवारणं ।
समस्त दुरितोपशमनं विष्णुपादोदकं शुभम् ॥

“आकाल मृत्यु और हर रोग का विनाशक, हर दोष का विनाशक – श्री विष्णु का चरण का पानि शुभ है ।”

जब दवा लेना है/रोग है:

शरीरे र्जर्जरीभूते व्याधिग्रस्ते कळेवरे ।
औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः ॥

“ग्लानिमय शरीर मे जब आत्मा को व्याधियों पकडते है, गङ्गा का बूँद हि दवा है और वैद्य नारायण, हरि ।”

अच्युतानन्तगोविन्द नामोच्चारण भेषजात् ।
नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहं ॥

“अच्युता, अनन्ता और गोविन्दा – इन तीनों नामों का उच्चारण हर रोग का नाश करने का दवा है । मैं सत्य और सत्य को बोल रहा हू ।”

—पद्म पुराण, उत्तर खण्ड, अध्याय ७८, श्लोकों ५३-५४

अश्वत्था पेड को नमस्कार करने केलिये:

मूलतो ब्रह्मरूपाय मध्यतो विष्णुरूपिणे ।
अग्रतः शिवरूपाय अश्वत्थाय नमो नमः ॥

“जिसका जड़ ब्रह्मा के रूप मे है, मध्य विष्णु का रूप मे है और ऊपर का भाग शिव का रूप मे है, अश्वत्था पेड को नमस्कार और नमास्कार ।”

साधनों मे श्लोकों का गलत उच्चारण का दोषो को नाश करने केलिये:

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं जनार्दन ।
यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे ॥

© Copyrights 2022-26 Achyuta Bhakti Deets

“बिना सहि मन्त्रोंके, बिना सहि विधियोंके, बिना भक्तिसे, जनार्दना, जो पूजा मै ने किया है, उसको पूर्ण बन जाये ।”

—विष्णु संहिता, पटला २८, श्लोको ८७-८८

**यद्दत्तं भक्तिमात्रेण पत्रं पुष्पं फलं जलम् ।
आवेदितं निवेद्यान् तु तद् गृहाणानुकंपया ॥**

“जो पत्ते, फूलों, फलों और पानि मै ने केवल भक्तिसे दिया है, करुणा से उनसब को स्वीकार करो ।”

**विधिहीनं मन्त्रहीनं यत्किञ्चिदुपपदितं ।
क्रियामन्त्रविहीनं वा तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि ॥**

“बिना विधियों और मन्त्रों से जो भी मै ने किया है – उन सब को क्षमा करो ।”

गलत उच्चारण का दोषों का नाश केलिये, इन श्लोकों के साथ, द्विजों पुरुष सूक्त का भी उच्चारण करसकते है ।

हानि को रोकने केलिये:

**कार्तवीर्यार्जुनोनाम राजा बाहू सहस्रवान् ।
तस्य नामस्मरणमात्रेण गतं नष्टं च लभ्यते ॥**

“कार्तवीर्य अर्जुन नाम का राजा को हज़ारों हाथ था । उनका नाम का स्मरण से हि, हानियों नष्ट हो जाते है और लाभ मिलता है ।”

अपना पापों का नाश केलिये प्रार्थना करने केलिये:

**अपराध सहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया ।
दासोऽहमिति मां मत्वा क्षमस्व पुरुषोत्तम ॥**

“हज़ारों अपराधो मुझसे होचुके है । मै दास हू – येह समज कर मुझसे हुअ पाप को क्षमा करो, पुरुषोत्तमा ।”

**पापोहं पापकर्माहं पापात्मा पापसंभवः ।
त्राहिमां कृपया देव शरणागतवत्सल ॥**

“मै पाप हूं, मै पाप कर्म हूं, पापात्मा हूं और पाप से उत्पन्न हुअ हूं । मेरा रक्षा करो, शरणागतवत्सला ।”

**अज्ञानादथवा ज्ञानादशुभं यन्मया कृतम् ।
क्षन्तुमर्हसि तत्सर्वं दास्येन च गृहाण माम् ॥**

“अनजाने और जानबूझ कर जो अशुभ कार्यों मै ने किया है – उन सब को क्षमा करो, मुझे दास समज कर ।”

(प्रदक्षिणा करते समय येह नीचे का श्लोक का उच्चारण कीजिये)

यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।
तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे ॥

“जो जो पापों बोहोत जन्मों से कर्चुका हू, उन सब का विनाश प्रदक्षिण करेगा, बार बार ।”

दीप को जलाते समय:

शुभं करोति कल्याणम् आरोग्यं धन सम्पदः ।
शत्रुबुद्धि विनाशाय दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते ॥

“शुभ, कल्याण, आरोग्य, और धन को बनाने वाला और शत्रुबुद्धि का विनाश करने वाला दीप का ज्योति को नमस्कार ।”

दीपज्योतिः परब्रह्म दीपज्योतिर्जनार्दनः ।
दीपो हरतु मे पापं दीपज्योतिर्नमोऽस्तुते ॥

“दीप का ज्योति पर ब्रह्म है, दीप का ज्योति जनार्दना है । दीप मेरा पापों का हरण करे । मैं दीप का ज्योति को नमस्कार करता हू ।”

ध्यानस्नान प्रयोगाः

यह श्लोकों को मन को शुद्ध करने हेतु जपने के लिए है, जिसमें आकाश-तत्त्व में स्थित श्री विष्णु के तुरीय-रूप का ध्यान किया जाता है। जैसा कि श्री सनत्कुमार ऋषि द्वारा वामन पुराण में वर्णित है तथा श्री विष्णु तीर्थ द्वारा उद्धृत किया गया है।

**खस्थितं पुण्डरीकाक्षं मन्त्रमूर्तिं हरिं स्मरेत् ।
अनन्तादित्यसङ्काशं वासुदेवञ्चतुर्भुजम् ॥ १ ॥**

“मनुष्य को आकाश में स्थित, मंत्रस्वरूप, हरि - अनन्त सूर्य के समान तेजस्वी, चार भुजाओं वाले वासुदेव - पुण्डरीकाक्ष का स्मरण करना चाहिए।”

**शङ्खचक्रगदापद्मपीताम्बरधरं हरिम् ।
श्यामलं शान्तहृदयं प्रसन्नवदनं शुभम् ॥ २ ॥**

“हरि शंख, चक्र, गदा और पद्म धारण किए हुए हैं तथा पीताम्बर धारण करते हैं। उनका वर्ण श्याम है, हृदय शान्त है और मुख प्रसन्न व मंगलमय है।”

**अनेकरत्नसञ्छत्रस्फुरन्मकरकुण्डलम् ।
वनमालापरिवृतन्नारदादिभिरर्चितम् ॥ ३ ॥**

“वे असंख्य रत्नों से सुशोभित, चमकते हुए मकराकृति कुण्डल धारण करते हैं, वनमाला से अलंकृत हैं और नारद आदि ऋषियों द्वारा पूजित हैं।”

**केयूरहारिणं देवं सुवर्णमुकुटोज्ज्वलम् ।
ध्वजवज्राङ्कुशालक्ष्म पादपद्मं सुनिर्मलम् ॥ ४ ॥**

“वे देव केयूर और हारों से विभूषित हैं, स्वर्णमुकुट से देदीप्यमान हैं तथा उनके अत्यन्त पवित्र चरणकमलों पर ध्वज, वज्र, अंकुश आदि के चिह्न अंकित हैं।”

**तत्पादोदकजान्धारां निपतन्तीं स्वमूर्धनि ।
चिन्तयेद्ब्रह्मरन्ध्रेण प्रविशन्तीं स्वकां तनुम् ॥ ५ ॥**

“उनके चरणों से प्रवाहित जलधारा को अपने मस्तक पर गिरती हुई कल्पना करनी चाहिए तथा यह ध्यान करना चाहिए कि वह ब्रह्मरन्ध्र के माध्यम से अपने शरीर में प्रवेश कर रही है।”

**तया प्रक्षाळयेत् सर्वमन्तर्देहगतं मलम् ।
तत्क्षणात् विरजामन्त्री जायते स्फाटिकोपमः ॥ ६ ॥**

“उसके द्वारा शरीर के भीतर स्थित समस्त मलिनता नष्ट हो जाती है और उसी क्षण साधक विरजा-मंत्र का अधिकारी बनकर स्फटिक के समान निर्मल हो जाता है।”

**इदं ध्यानं परं मन्त्रात्सहस्रगुणमुत्तमम् ।
सार्धत्रिकोटितीर्थेषु स्नानात् कोटिगुणाधिकम् ॥ ७ ॥**

“यह ध्यान मंत्र से भी हजार गुना श्रेष्ठ है तथा साढ़े तीन करोड़ तीर्थों में स्नान करने से भी करोड़ों गुना अधिक फलदायक है ।”

**यो नित्यमाचरेदेवं स वै नारायणस्मृतः ।
कालमृत्युमतिक्रम्य जीवन्मुक्तो न संशयः ॥ ८ ॥**

“जो व्यक्ति नित्य इस साधना का आचरण करता है, वही वास्तव में नारायण का स्मरण करने वाला है - वह काल और मृत्यु को पार कर जीवन-मुक्त हो जाता है । इसमें कोई संशय नहीं ।”

**इडा भागीरथीगङ्गा पिङ्गला यमुना स्मृता ।
तयोर्मध्ये गता नाडी सुषुम्नाख्या सरस्वती ॥ ९ ॥**

“इडा नाड़ी में भागीरथी गंगा का, पिङ्गला नाड़ी में यमुना का तथा इनके मध्य स्थित सुषुम्ना नाड़ी में सरस्वती का स्मरण करना चाहिए ।”

**ज्ञानहृदे ध्यानजले रागद्वेषमलापहे ।
यस्स्नाति मानसे तीर्थे स याति परमाङ्गतिम् ॥ १० ॥**

“ज्ञानरूप हृदय और ध्यानरूप जल में स्नान करने से राग-द्वेष आदि मल नष्ट हो जाते हैं; जो मनरूप तीर्थ में स्नान करता है, वह परम गति को प्राप्त होता है ।”

**अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थाङ्गतोऽपि वा ।
यस्स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरशुचिः ॥ ११ ॥**

“चाहे कोई अपवित्र हो या पवित्र, किसी भी अवस्था में हो - जो पुण्डरीकाक्ष का स्मरण करता है, वह भीतर और बाहर से शुद्ध हो जाता है ।”

**अतिनीलघनश्यामं नलिनायतलोचनम् ।
स्मरामि पुण्डरीकाक्षं तेन स्नातो भवाम्यहम् ॥ १२ ॥**

“मैं अत्यन्त नील मेघ के समान श्यामवर्ण और कमल के समान नेत्रों वाले पुण्डरीकाक्ष का स्मरण करता हूँ । उन्हीं के द्वारा मैं स्नात और पवित्र हो जाता हूँ ।”

परमा संहिता का नित्या पूजा मै उपयोग किया जानेवाला स्तुति:

(परमा संहिता, अध्याय २९, श्लोकों २१-३३)

**जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन ।
नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज ॥ २१ ॥**

“हे पुण्डरीकाक्ष, विजय हो आपको, हे विश्व के धारक, आपको नमस्कार । हे हृषीकेश, महापुरुष, आदि पुरुष, आपको प्रणाम ।”

**देवानां दानवानाञ्च सामान्यमधिदैवतम् ।
सर्वदाचरणद्वन्द्वं ब्रजामि शरणं तव ॥ २२ ॥**

“जो देवों और दानवों के लिए समान रूप से आदिदैव हैं – मैं सदा आपके चरणों की शरण लेता हूँ ।”

**एकस्त्वमसि लोकस्य स्रष्टा संहारकस्तथा ।
अध्यक्षश्चानुमन्ता च गुणमायासमावृतः ॥ २३ ॥**

“आप ही इस लोक के एकमात्र सृष्टिकर्ता और संहारक हैं, और अध्यक्षक, अनुज्ञाता तथा गुणों और माया से युक्त हैं ।”

**संसारसागरं घोरमनन्तक्लेशभाजनम् ।
त्वामेव शरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनस्विनः ॥ २४ ॥**

“जो बुद्धिमान हैं वे इस भयानक, दुखमय संसार सागर को केवल आपकी शरण लेकर पार कर जाते हैं ।”

**न ते रूपं न चाकारो नायुधानि नचास्पदम् ।
तथाऽपि पुरुषाकारो भक्तानां च प्रकाशसे ॥ २५ ॥**

“आपका कोई रूप, आकार, शस्त्र या ठिकाना नहीं है । फिर भी आप भक्तों को पुरुषरूप में प्रकट होते हैं ।”

**नैव किञ्चित्परोक्षं ते प्रत्यक्षोऽसि न कस्यचित् ।
नैव किञ्चिदसिध्यन्ते न च सिद्धोऽसि कस्यचित् ॥ २६ ॥**

“आपके लिए कुछ भी अप्रकट नहीं है, पर आप किसी के लिए प्रत्यक्ष भी नहीं हैं । आपके लिए कुछ भी असंभव नहीं है, पर कोई आपको प्राप्त नहीं कर सकता ।”

**कार्याणां कारणं पूर्वं वचसां वाच्यमुत्तमम् ।
योगानां परमा सिद्धिः परमं ते परं विदुः ॥ २७ ॥**

“आप सभी कार्यों के आदि कारण हैं । वाणी में आप सर्वोत्तम वाक्य हैं । योगों में आप परम सिद्धि हैं, जिन्हें परम पुरुष कहा जाता है ।”

अहं भीतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन् महाभये ।
पाहि मां पुण्डरीकाक्ष न जाने शरणं परम् ॥ २८ ॥

“हे देवेश, मैं इस भयावह संसार में भयभीत हूँ । हे पुण्डरीकाक्ष, मेरा रक्षा कीजिए, मुझे कोई अन्य शरण ज्ञात नहीं है ।”

कालेष्वपिच सर्वेषु दिक्षु सर्वासु चाच्युत ।
शरीरेच गतौ चापि वर्धते मे महद्भयम् ॥ २९ ॥

“हे अच्युत, समय और सभी दिशाओं में, शरीर त्यागते समय भी मुझे अत्यंत भय बना रहता है ।”

त्वत्पादकमलादन्यत्र मे जन्मान्तरेष्वपि ।
निमित्तं कुशलस्यास्ति येन गच्छामि सद्गतिम् ॥ ३० ॥

“आपके चरण कमलों के सिवा मेरे लिए और कोई भी जन्मजन्मांतर में कल्याण का साधन नहीं है-, जिससे मैं सद्गति को प्राप्त कर सकूँ ।”

विज्ञानं यदिदं प्राप्तं यदिदं स्थानमर्जितम् ।
जन्मान्तरेऽपि मे देव मा भूदस्य परिक्षयः ॥ ३१ ॥

“हे देव, यह जो विज्ञान और स्थान मैंने प्राप्त किया है, वह मेरे अगले जन्मों में भी नष्ट न हो – यही मेरी प्रार्थना है ।”

दुर्गतायां वाऽपि जातायां त्वद्गतो मे मनोरथः ।
यदि नाशं नविन्देत तावदस्मिन् कृतीसदा ॥ ३२ ॥

“यदि मैं सबसे दीन अवस्था में भी जन्म लूँ, और फिर भी आपका चिंतन न छूटे – तभी मैं वास्तव में धन्य कहलाऊँगा ।”

न कामकलुषं चित्तं मम ते पादयाः स्थितम् ।
कामये वैष्णवत्वं तु सर्वजन्मसु केवलम् ॥ ३३ ॥

“मेरा मन कामनाओं से मुक्त होकर केवल आपके चरणों में स्थित रहे, और मैं सभी जन्मों में केवल वैष्णवता की ही कामना करूँ ।”

सारे कार्यों और उनके परिणामों को श्री विष्णु को अर्पण करने केलिये और भगवान का कृपा को माँगने केलिये:

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्य भावेन रक्ष रक्ष जनार्दन ॥

“अन्य शरण मुझे नहि है और केवल तुम हि मेरे शरण हो । इसीलिये, करुणा से, रक्षा करो और रक्षा करो, जनार्दना ।”

संसारं दुष्करं घोरं दुर्निरीक्षं दुरासदम् ।
भीतोऽहं दारुणं दृष्ट्वा त्राहि मां भव सागरात् ॥

“येह घोर संसार सहन नहि किया जासकता । मै भयभीत हू । इस्को देख कर, मेरा रक्षा करो ।”

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि विहितं यन्मया शुभं ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु प्रीतो भव जनार्दन ॥

“जान बुझकर या अनजाने किया जोह भी शुभ कार्यों मै ने किया है - वोह सब पूर्ण बनजाये और तुझे प्रसन्न करे, जनार्दना ।”

(इस श्लोक को दिन के अन्त मे या मुख्य कार्यों के बद् उच्चारण किया जा सकता है)

कायेन वाचा मनसेन्द्रियर्वा बुद्ध्यात्मना वानुसृतस्वभावात् ।
करोमि यद्यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयामि ॥

“शरीर से, भाषण से, मनस से, इन्द्रियों से, बुद्धि से, आत्मा से और अपने स्वभाव से, जो किया गया है, वोह सब को मे नारायण को समर्पण करता हू ।”

—विष्णु सहस्रनामा का उत्तरपीठिका (भागवत पुराण, स्कन्ध ११, अध्याय २, श्लोक ३६; श्री मध्वाचार्य ने कृष्णामृता महार्णवा, श्लोक १६ मे उद्धरित किया है)

२. वैदिक सूक्तो और मन्त्रो

येह भाग मे वेद मन्त्रों है और सिर्फ़ द्विजो हि इनका उच्चारण करसक्ते है । दुस्रों इस्को चोड सक्ते है ।

नारायण उपनिषद

(कृष्ण यजुर्वेद)

नारायणोपनिषत्

ॐ सह नांवतु ।

सह नौ भुनक्तु ।

सह वीर्यं करवावहे ।

तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहे ॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

ॐ अथ पुरुषो ह वै नारायणोऽकामयत प्रजाः संजेयेति । नारायणात्प्राणो जायते । मनः सर्वेन्द्रियाणि च । खं वायुर्ज्योतिरापः पृथिवी विश्वस्य धारिणी । नारायणाद्ब्रह्मा जायते । नारायणाद्द्रुद्रो जायते । नारायणादिन्द्रो जायते । नारायणात्प्रजापतयः प्रजायन्ते । नारायणाद्द्वादशादित्या रुद्रा वसवस्सर्वाणि च छन्दागंसि । नारायणादेव समुत्पद्यन्ते । नारायणे प्रवर्तन्ते । नारायणे प्रलीयन्ते ॥

ॐ । अथ नित्यो नारायणः । ब्रह्मा नारायणः । शिवश्च नारायणः । शक्रश्च नारायणः । द्यावापृथिव्यौ च नारायणः । कालश्च नारायणः । दिशश्च नारायणः । ऊर्ध्वश्च नारायणः । अधश्च नारायणः । अन्तर्बहिश्च नारायणः । नारायण एवेदं सर्वम् । यद्भूतं यच्च भव्यम् । निष्कलो निरञ्जनो निर्विकल्पो निराख्यातः शुद्धो देव एको नारायणः । न द्वितीयोऽस्ति कश्चित् । य एवं वेद । स विष्णुरेव भवति स विष्णुरेव भवति ॥

ओमित्यग्रे व्याहरेत् । नम इति पश्चात् । नारायणायेत्युपरिष्ठात् । ओमित्येकाक्षरम् । नम इति द्वे अक्षरे । नारायणायेति पञ्चाक्षराणि । एतद्वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदम् । यो ह वै नारायणस्याष्टाक्षरं पदमध्वेति । अनपब्रवस्सर्वमायुरेति । विन्दते प्राजापत्यं रायस्पोषं गौपत्यम् । ततोऽमृतत्वमश्नुते ततोऽमृतत्वमश्नुत इति । य एवं वेद ॥

प्रत्यगानन्दं ब्रह्म पुरुषं प्रणवस्वरूपम् । अकार उकार मकार इति । तानेकधा समभरत्तदेतदोमिति । यमुक्त्वा मुच्यते योगी जन्मसंसारबन्धनात् । ॐ नमो नारायणायेति मन्त्रोपासकः । वैकुण्ठभुवनलोकं गमिष्यति । तदिदं परं पुण्डरीकं विज्ञानघनम् । तस्मात्तदिदावन्मात्रम् । ब्रह्मण्यो देवकीपुत्रो ब्रह्मण्यो मधुसूदनोम् । सर्वभूतस्थमेकं नारायणम् । कारणपुरुषमकारणं परब्रह्मोम् । एतदथर्व शिरोयोऽधीते ॥

प्रातरंधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायमंधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति ।

माध्यन्दिनमादित्याभिमुखोऽधीयानः पञ्चपातकोपपातकात्प्रमुच्यते । सर्व वेद पारायण पुण्यं लभते ।

नारायणसायुज्यमवाप्नोति नारायण सायुज्यमवाप्नोति । य एवं वेद । इत्युपनिषत् ॥

ॐ सह नांवतु ।

सह नौ भुनक्तु ।

सह वीर्यं करवावहे ।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहे ॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥
इति श्री नारायणोपनिषत् ॥

नारायण सूक्त

(कृष्ण यजुर्वेद, तैत्तिरीय आरण्यक, प्रपाठक १०, अनुवाका १३)

नारायणसूक्तम्

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशम्भुवम् ।
विश्वं नारायणं देवमक्षरं परमं पदम् ॥ १ ॥

विश्वतः परमं नित्यं विश्वं नारायणं हरिम् ।
विश्वमेवेदं पुरुषस्तद्विश्वमुपजीवति ॥ २ ॥

पतिं विश्वस्यात्मेश्वरं शाश्वतं शिवमच्युतम् ।
नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं पुरायणम् ॥ ३ ॥

नारायणः परो ज्योतिरात्मा नारायणः परः ।
नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः ॥ ४ ॥

नारायण परो ध्याता ध्यानं नारायणः परः ।
यच्च किञ्चिज्जगत्सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा ॥ ५ ॥

अन्तर्बहिश्च तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः ।
अनन्तमव्ययं कविं समुद्रेऽन्तं विश्वशम्भुवम् ॥ ६ ॥

पद्मकोशप्रतीकाशं हृदयं चाप्यधोमुखम् ।
अधो निष्ट्या वितस्त्यान्ते नाभ्यामुपरि तिष्ठति ॥ ७ ॥

ज्वालामालाकुलं भाती विश्वस्यायतनं महत् ।
सन्ततं शिलाभिस्तु लम्बत्याकोशसन्निभम् ॥ ८ ॥

तस्यान्ते सुषिरं सूक्ष्मं तस्मिन्सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
तस्य मध्ये महानग्निर्विश्वार्चिर्विश्वतोमुखः ॥ ९ ॥

सोऽग्रं भुग्विभजन्तिष्ठन्नाहारमजरः कविः ।
तिर्यगूर्ध्वमंधशशापी रुश्मयस्तस्य सन्तताः ॥ १० ॥

सन्तापयति स्वं देहमापादतलमस्तकः ।
तस्य मध्ये वह्निशिखा अणीयोर्ध्वा व्यवस्थितः ॥ ११ ॥

नीलतोयदमध्यस्थाद्विद्युल्लेखेव भास्वरा ।
नीवारशूकवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपमा ॥ १२ ॥

तस्याः शिखाया मध्ये परमात्मा व्यवस्थितः ।
स ब्रह्म स शिवस्स हरिस्सेन्द्रस्सोऽक्षरः परमः स्वराट् ॥ १३ ॥

ऋतः सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलम् ।
ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नमः ॥

ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि ।

तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् ॥ (येह महानारायण उपनिषद का २९वाला मन्त्र, जिसे 'विष्णु गायत्रि' कहा जाता है, जिस्को अन्त मे बोल जाता है)

ॐ शान्ति शान्ति शान्तिः ॥

पुरुष सूक्त

(ऋग्वेद का पुरुष सूक्ता; मण्डला १०, सूक्ता ९०)

पुरुषसूक्तम्

अथ पुरुषसूक्तम् ॥

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ १ ॥

पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदत्रेनातिरोहति ॥ २ ॥

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ३ ॥

त्रिपादूर्ध्व उद्वैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अग्नि ॥ ४ ॥

तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरुषः ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ ५ ॥

यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्ध्रविः ॥ ६ ॥

तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥ ७ ॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पशून्ताँश्चक्रे वायुव्यानारण्यान्त्राम्याश्च ये ॥ ८ ॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दाँसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ ९ ॥

तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥ १० ॥

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ॥ ११ ॥

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥ १२ ॥

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षुः सूर्यो अजायत ।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥ १३ ॥

© Copyrights 2022-26 Achyuta Bhakti Deets

नाभ्यां आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समंवर्तत ।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन् ॥ १४ ॥

सृप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सृप्त समिधः कृताः ।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्न्युरुषं पशुम् ॥ १५ ॥

यज्ञेनं यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥ १६ ॥

॥ अथ कृष्णयजुर्वेदीय पुरुषसूक्तः ॥

(कृष्ण-यजुर्वेद का पुरुष सूक्ता; तैत्तिरीय आरण्यक, प्रपाठका ३, अनुवाका १२)

हरिः ॐ ॥

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षस्सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतो वृत्वा । अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ १ ॥

पुरुष एवेदं सर्वम् । यद्भूतं यच्च भव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानः । यदत्रैनातिरोहति ॥ २ ॥

एतावानस्य महिमा । अतो ज्यायांश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि । त्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥ ३ ॥

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः । पादोऽस्येहाभवात्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत् । साशानानशने अग्नि ॥ ४ ॥

तस्माद्विराडजायत । विराजो अधि पूरुषः ।
स जातो अत्यरिच्यत । पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ ५ ॥

यत्पुरुषेण हविषां । देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तो अस्यासीदाज्यम् । ग्रीष्म इध्मश्शरद्ध्रविः ॥ ६ ॥

सुप्तास्यासन्परिधयः । त्रिस्सुप्तसमिधः कृताः ।
देवा यद्यज्ञन्तन्वानाः । अबध्न्युरुषं पशुम् ॥ ७ ॥

तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् । पुरुषं ज्ञातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त । साध्याऋषयश्च ये ॥ ८ ॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः । संभृतं पृषदाज्यम् ।
पशूस्तांश्चक्रे वायव्यान् । आरण्यान्ग्राम्याश्च ये ॥ ९ ॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः । ऋचस्सामानि जज्ञिरे ।
छन्दांसि जिज्ञिरे तस्मात् । यजुस्तस्मादजायत ॥ १० ॥

तस्मादश्वा अजायन्त । ये के चोभ्यादतः ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात् । तस्माज्जाता अजावयः ॥ ११ ॥

यत्पुरुषं व्यदधुः । कृत्विधा व्यकल्पयन् ।
मुखङ्किमंस्य कौ बाहू । कावूरू पादावुच्येते ॥ १२ ॥

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत् । बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः । पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥ १३ ॥

चन्द्रमा मनसो जातः । चक्षोः सूर्यो अजायत ।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च । प्राणाद्वायुरंजायत ॥ १४ ॥

नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम् । शीष्णो द्यौः समवर्तत ।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात् । तथा लोकाँ अकल्पयन् ॥ १५ ॥

वेदहमेतं पुरुषं महान्तम् । आदित्यवर्णन्तमसस्तु पारे ।
सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरः । नामानि कृत्वाऽभिवदन्यदास्ते ॥ १६ ॥

धाता पुरस्ताद्यमुंदाजुहारं । शक्रः प्रविद्वान्प्रदिशश्चतस्रः ।
तमेवँ विद्वान्मृतं इह भवति । नान्यः पन्था अयनाय विद्यते ॥ १७ ॥

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः । तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानस्सचन्ते । यत्र पूर्वं साध्यास्सन्ति देवाः ॥ १८ ॥

उत्तरनारायणानुवाकः

(तैत्तिरीय आरण्यक, प्रपाठका ३, अनुवाका १३)

अद्भ्यस्संभूतः पृथिव्यै रसाच्च । विश्वकर्मणस्समवर्त्ताधि ।
तस्य त्वष्टां विदधद्रूपमेति । तत्पुरुषस्य विश्वमाजां नमग्रे ॥ १ ॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम् । आदित्यवर्णन्तमसः परस्तात् ।
तमेवँ विद्वान्मृतं इह भवति । नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥ २ ॥

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तः । अजायमानो बहुधा विजायते ।
तस्य धीराः परिजानन्ति योनिम् । मरीचीनां पदमिच्छन्ति वेधसः ॥ ३ ॥

यो देवेभ्य आतपति । यो देवानां पुरोहितः ।
पूर्वो यो देवेभ्यो जातः । नमो रुचाय ब्राह्मये ॥ ४ ॥

रुचं ब्राह्मञ्जनयन्तः । देवा अग्रे तदब्रुवन् ।
यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात् । तस्य देवा असन्वर्शे ॥ ५ ॥

हीश्वं ते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ । अहोरात्रे पार्श्वे । नक्षत्राणि रूपम् । अश्विनौ व्यात्तम् ।
इष्टं मनिषाण । अमुं मनिषाण । सर्वं मनिषाण ॥ ६ ॥

इति उत्तरनारायणानुवाकः ॥

॥ अथ शुक्लयजुर्वेदीय पुरुषसूक्तः ॥

(शुक्ल-यजुर्वेद का पुरुष सूक्ता; वजसनेयि संहिता, अध्याया ३१)

हरिः ॐ ॥

सहस्रंशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिꣳ सर्वतं स्पृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ १ ॥

पुरुषं एवेदꣳ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदत्रेनातिरोहति ॥ २ ॥

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं द्विवि ॥ ३ ॥

त्रिपादूर्ध्व उद्वैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अग्नि ॥ ४ ॥

ततो विराडंजायत विराजो अधि पूरुषः ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ ५ ॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पृशूस्ताँश्चक्रे वायुव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥ ६ ॥

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दाँसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ ७ ॥

तस्मादश्वा अजायन्त ये के चौभयादतः ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥ ८ ॥

तं युज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त साध्याऋषयश्च ये ॥ ९ ॥

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्यासीत्किं बाहू किमूरू पादा उच्येते ॥ १० ॥

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याꣳ शूद्रो अजायत ॥ ११ ॥

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षुः सूर्यो अजायत ।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरंजायत ॥ १२ ॥

नाभ्यां आसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत ।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन् ॥ १३ ॥

यत्पुरुषेण हविषां देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्ध्रुविः ॥ १४ ॥

सृप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सृप्त समिधः कृताः ।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्वन् पुरुषं पशुम् ॥ १५ ॥

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥ १६ ॥

उत्तरनारायणानुवाकः (Uttara-Naaraayana Anuvaaka)

अद्भ्य सम्भृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्त्तताग्रे ।
तस्य त्वष्टां विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानुमग्रे ॥ १७ ॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसुः पुरस्तात् ।
तमेवं विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्थां विद्यतेऽयनाय ॥ १८ ॥

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते ।
तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा ॥ १९ ॥

यो देवेभ्यं अतपति यो देवानां पुरोहितः ।
पूर्वो यो देवेभ्योजातो नमो रुचाय ब्राह्मणे ॥ २० ॥

रुचं ब्राह्मं जनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन् ।
यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन्वशे ॥ २१ ॥

हीश्वं ते लक्ष्मीश्च पत्यौ अहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् ।
इष्णात्रिंषाणामुं मनिषाण सर्वलोकं मं इषाण ॥ २२ ॥

इति उत्तरनारायणानुवाकः ॥

श्री सूक्ता

श्रीसूक्तम्

ॐ हिरण्यवर्णा हरिणीं सुवर्णरंजतस्रंजाम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म् आवह ॥ १ ॥

तां म् आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥ २ ॥

अश्वपूर्वा रथमध्यां हस्तिनादप्रमोधिनीम् ।
श्रियं देवीमुपंहये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥ ३ ॥

कां सौस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तृपयन्तीम् ।
पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोपंहये श्रियम् ॥ ४ ॥

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तां पद्मिनीमीं शरणं अहं प्रपद्येऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ॥ ५ ॥

आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तवं वृक्षोऽथ बिल्वः ।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरा याश्च बाह्या अलक्ष्मीः ॥ ६ ॥

उपैतु मां देवसुखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतोऽस्मिं राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ॥ ७ ॥

क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठाम् अलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान् निर्णुद मे गृहात् ॥ ८ ॥

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं गुं सर्वभूतानां तामिहोपंहये श्रियम् ॥ ९ ॥

मनसुः काममाकूतिं वाचस्सत्यमंशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥ १० ॥

कर्दमेन प्रजाभूता मयि संभव कर्दम ।
श्रियं वासयं मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥ ११ ॥

आपः सृजन्तुं स्निग्धानि चिक्लीत वंस मे गृहे ।
निचं देवीं मातरं श्रियं वासयं मे कुले ॥ १२ ॥

आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं सुवर्णां हेम मालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म् आवह ॥ १३ ॥

आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म् आवह ॥ १४ ॥

तां म् आवंहु जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानुहम् ॥ १५ ॥
यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।
सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्री कामं सततं जपेत् ॥ १६ ॥
पद्मप्रिये पद्मिनि पद्महस्ते पद्मालये पद्मदलायताक्षि ।
विश्वप्रिये विष्णु मनोऽनुकूले त्वत्पाद पद्मं मयि सन्निधत्स्व ॥

विष्णु सूक्ता

(ऋग्वेद, शाकला संहिता, मण्डला १, सूक्ता १५४)

विष्णुसूक्तम्

विष्णोर्नु कं वीर्याणि प्र वोचं यः पार्थिवानि विममे रजांसि ।
यो अस्कंभायदुत्तरं सुधस्थं विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायः ॥ १ ॥

प्र तद्विष्णुः स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः ।
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ॥ २ ॥

प्र विष्णवे शूषमेतु मन्मं गिरिक्षितं उरुगायाय वृष्णे ।
य इदं दीर्घं प्रयतं सुधस्थमेको विममे त्रिभिरित्यदेभिः ॥ ३ ॥

यस्य त्री पूर्णा मधुना पदान्यक्षीयमाणा स्वधया मदन्ति ।
य उं त्रिधातुं पृथिवीमुत द्यामेको दाधार भुवनानि विश्वा ॥ ४ ॥

तदस्य प्रियमभि पार्थो अश्यां नरो यत्र देवयवो मदन्ति ।
उरुक्रमस्य स हि बन्धुरित्था विष्णोः पदे परमे मध्व उत्सः ॥ ५ ॥

ता वां वास्तून्युश्मसि गमंघ्यै यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः ।
अत्राह तदुरुगायस्य वृष्णः परमं पदमवं भाति भूरि ॥ ६ ॥

देवि सूक्ता

(ऋग्वेद, शाकला संहिता, मण्डला १०, सूक्ता १२५)

देवीसूक्तम्

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदैवैः ।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा ॥ १ ॥

अहं सोममाहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम् ।
अहं दंधामि द्रविणं हविष्मते सुप्रार्यै यजमानाय सुन्वते ॥ २ ॥

अहं राष्ट्रीं संगमनी वसूनां चिकितुषीं प्रथमा यज्ञियांनाम् ।
तां मां देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूयविशयन्तीम् ॥ ३ ॥

मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम् ।
अमन्तवो मां त उप क्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि ॥ ४ ॥

अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः ।
यं कामये तंतमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥ ५ ॥

अहं रुद्राय धनुरा तनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्त्वा उं ।
अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आ विवेश ॥ ६ ॥

अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरुप्स्वन्तः समुद्रे ।
ततो वि तिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं द्यां वर्ष्मणोपं स्पृशामि ॥ ७ ॥

अहमेव वातं इव प्र वांम्यारभमाण् भुवनानि विश्वां ।
पुरो दिवा पुर एना पृथिव्यैतावती महिना सं बभूव ॥ ८ ॥

मन्यु सूक्ता

(ऋग्वेद, शाकला संहिता, मण्डला १०, सूक्तों ८३-८४)

मन्युसूक्तम्

(सूक्त ८३)

यस्ते मन्योऽविधद्वज्र सायक सह ओजः पुष्यति विश्वमानुषक् ।
साह्याम् दासमार्यं त्वया युजा सहस्कृतेन सहसा सहस्वता ॥ १ ॥

मन्युरिन्द्रो मन्युरेवासं देवो मन्युर्होता वरुणो जातवेदाः ।
मन्युं विशं ईळते मानुषीर्याः पाहि नो मन्यो तपसा सजोषाः ॥ २ ॥

अभीहि मन्यो त्वसस्तवीयान्तपसा युजा वि जंहि शत्रून् ।
अमित्रहा वृत्रहा दस्युहा च विश्वा वसूत्या भरा त्वं नः ॥ ३ ॥

त्वं हि मन्यो अभिभूत्योजाः स्वयम्भूर्भामो अभिमातिषाहः ।
विश्वचर्षणिः सहुरिः सहावानस्मास्वोजः पृतनासु धेहि ॥ ४ ॥

अभागः सन्नप परेतो अस्मि तव क्रत्वां तविषस्यं प्रचेतः ।
तं त्वां मन्यो अकृतुर्जिहीळहं स्वा तनूर्बलदेयाय मेहि ॥ ५ ॥

अयं ते अस्म्युप मेहृवाङ्प्रतीचीनः सहुरे विश्वधायः ।
मन्यो वज्रिन्नाभि मामा ववृत्स्व हनाव दस्यूरुत बोध्यापेः ॥ ६ ॥

अभि प्रेहि दक्षिणतो भवा मेऽधा वृत्राणि जङ्घनाव भूरि ।
जुहोमि ते धरुणं मध्वो अग्रमुभा उपांशु प्रथमा पिबाव ॥ ७ ॥

(सूक्त ८४)

त्वयां मन्यो सरथमारुजन्तो हर्षमाणासो धृषिता मरुत्वः ।
तिग्मेषव आयुधा संशिशाना अभि प्र यन्तु नरो अग्निरूपाः ॥ ८ ॥

अग्निरिव मन्यो त्विषितः सहस्व सेनानीर्नः सहुरे हत एधि ।
हत्वाय शत्रून्वि भजस्व वेद ओजो मिमानो वि मृधो नुदस्व ॥ ९ ॥

सहस्व मन्यो अभिमातिमस्मे रुजन्मृणन्मृणन्प्रेहि शत्रून् ।
उग्रं ते पाजो नन्वा रुरुधे वशी वशं नयस एकज त्वम् ॥ १० ॥

एको बहूनामसि मन्यवीळितो विशांविशं युधये सं शिशाधि ।
अकृत्तरुक्त्वया युजा वयं द्युमन्तं घोषं विजयाय कृण्महे ॥ ११ ॥

विजेषकदिन्द्रं इवानवब्रवोऽस्माकं मन्यो अधिपा भवेह ।
प्रियं ते नाम सहुरे गृणीमसि विद्वा तमुत्सं यतं आब्रभूथं ॥ १२ ॥

आभूत्या सहजा वंज्र सायकृ सहो बिभर्ष्यभिभूत उत्तरम् ।
क्रत्वा नो मन्यो सह मेघैधि महाधनस्य पुरुहूत संसृजि ॥ १३ ॥

संसृष्टं धनमुभयं समाकृतमस्मभ्यं दत्तां वरुणश्च मन्युः ।
भियं दधाना हृदयेषु शत्रवः पराजितासो अपि नि लयन्ताम् ॥ १४ ॥

बळित्यासूक्ता

(ऋग्वेद, शाकला संहिता, मण्डला १, सूक्ता १४१)

बळित्यासूक्तम्

बळित्या तद्वपुषे धायि दर्शतं देवस्यु भर्गुः सहसो यतो जनिं ।
यदीमुप ह्वरंते साधंते मतिऋतस्यु धेनां अनयन्त सुस्रुतः ॥ १ ॥

पृक्षो वपुः पितुमान्नित्यु आ शंये द्वितीयमा सप्तशिंवासु मातृषु ।
तृतीयमस्य वृषभस्यं दोहसे दशंप्रमतिं जनयन्त योषणः ॥ २ ॥

निर्यदीं बुधान्महिषस्यु वर्षस ईशानासुः शवंसा क्रन्तं सूरयः ।
यदीमनुं प्रदिवो मध्वं आधवे गुहा सन्तं मातरिश्वां मथायति ॥ ३ ॥

प्र यत्पितुः परमात्रीयते पर्या पृक्षुधो वीरुधो दंसुं रोहति ।
उभा यदस्य जनुषं यदिवन्तु आदिद्यविष्ठो अभवद्घृणा शुचिः ॥ ४ ॥

आदिन्मातृराविंशद्यास्वा शुचिरहिंस्यमान उर्विया वि वांवृधे ।
अनु यत्पूर्वा अरुहत्सनाजुवो नि नव्यसीष्ववरासु धावते ॥ ५ ॥

आदिद्धोतारं वृणते दिविष्टिषु भगमिव पपृचानासं ऋञ्जते ।
देवान्यत्क्रत्वा मज्मनां पुरुष्टुतो मर्तुं शंसं विश्वधा वेति धायसे ॥ ६ ॥

वि यदस्थाद्यजतो वातचोदितो ह्यारो न वक्त्रां जरणा अनाकृतः ।
तस्य पतमन्दक्षुषः कृष्णजहसुः शुचिंजन्मनो रज् आ व्यध्वनः ॥ ७ ॥

रथो न यातः शिक्भिः कृतो द्यामङ्गैभिररुषेभिरीयते ।
आदस्य ते कृष्णासो दक्षि सूरयुः शूरस्येव त्वेषथादीषते वयः ॥ ८ ॥

त्वया ह्यग्रे वरुणो धृतव्रतो मित्रः शांशुद्रे अर्युमा सुदानवः ।
यत्सीमनु क्रतुना विश्वथां विभुररान्न नेमिः परिभूरजायथाः ॥ ९ ॥

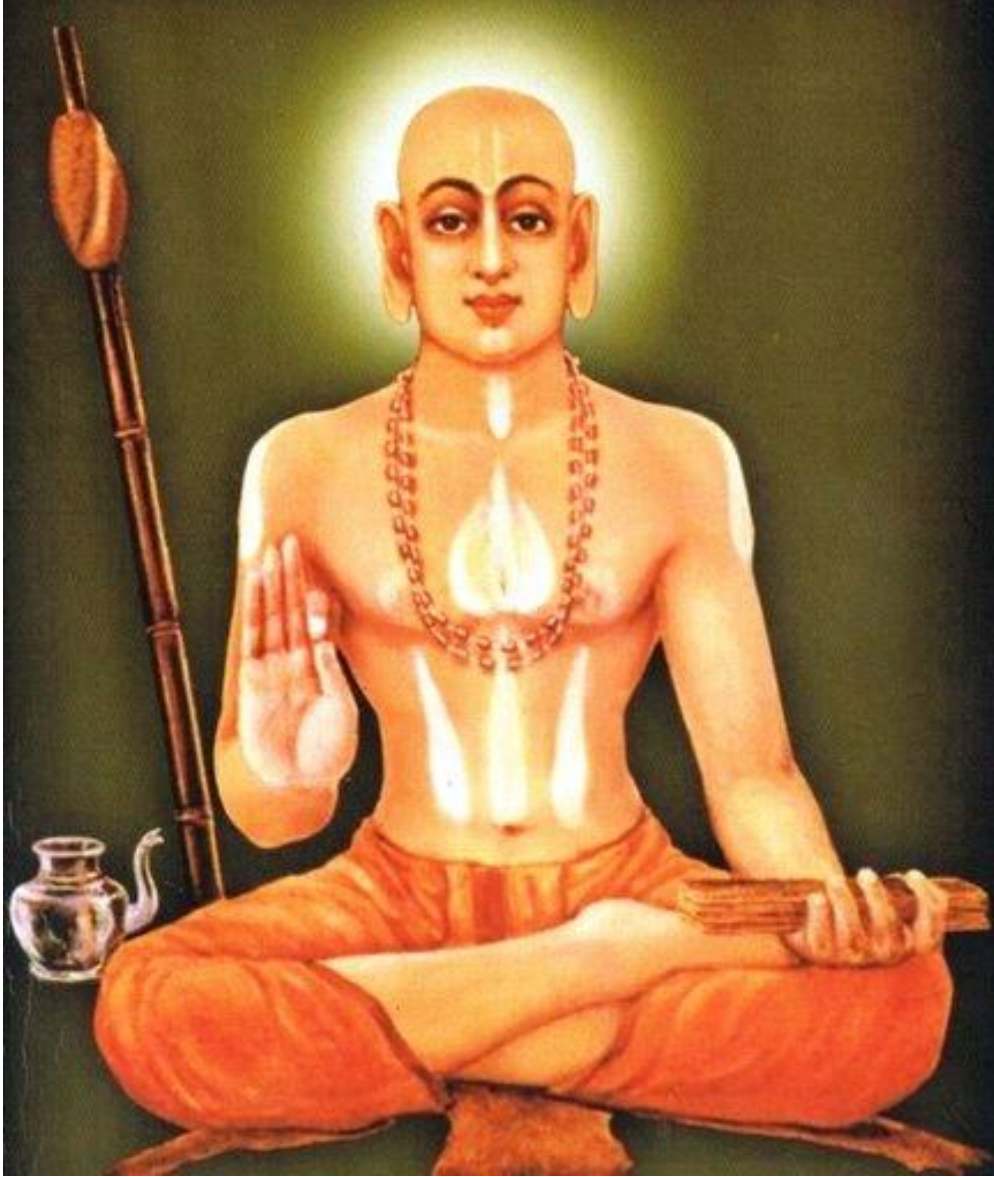
त्वमग्रे शशमानायं सुन्वते रत्नं यविष्ठ देवतांतिमिन्वसि ।
तं त्वा नु नव्यं सहसो युवन्वयं भगं न कारे मंहिरत्न धीमहि ॥ १० ॥

अस्मे रयिं न स्वर्थं दमूनसं भगं दक्षं न पंपृचासि धर्णसिम् ।
रश्मीरिव यो यमति जन्मनी उभे देवानां शंसंमृत आ चं सुक्रतुः ॥ ११ ॥

उत नः सुद्योत्मा जीराश्वो होता मन्द्रः शृणवच्चन्द्ररथः ।
स नो नेषुत्रेषतमैरमूरोऽग्निर्वामं सुवितं वस्यो अच्छं ॥ १२ ॥

अस्तांव्यग्निः शिमीवद्भिरकैः साम्राज्याय प्रतरं दधानः ।
अमी च ये मघवानो वयं च मिहं न सूरौ अति निष्टतन्युः ॥ १३ ॥

३. श्री मध्वाचार्या का द्वादशा स्तोत्रों



परिचय

द्वादशा स्तोत्रों श्री मध्वाचार्या से रचित हुए १२ स्तोत्रों है और श्री लक्ष्मी नारायणा का महत्व का विवरण करते है । बोहोत समय तक द्वादशा स्तोत्रों का केवल एक पाठ सब को मालुम था । लेकिन अब, श्रीमत आचार्या का सर्वमूल ग्रन्थों का 700 वर्षों का हस्तलिपि मिला, जिस्को श्री हृषीकेश तीर्थ ने लिखा था । इस्मे द्वादशा स्तोत्रों मे एक और स्तोत्र भी है और यहा तीसरा स्तोत्र है । इस स्तोत्र का अन्त मे २ गायत्रि छन्दसों है, जो डेढ़ अनुष्टुप छन्दों का समान है । एक अनुष्टुप छन्दस मे ३२ अक्षरों होते है और एक गायत्रि छन्दस मे २४ अक्षरों होते है । इस स्तोत्र का पूर्ण पाठ श्री रघुप्रिया तीर्था और श्री रघुरत्न तीर्था का ३०० और १५० साल पुराने हस्तलिपियों से मिला ।

इस स्तोत्र मे क्लिष्ट पद प्रयोगा भी है, जो जटिल शब्दो का उपयोग है । इस्को समझने केलिये शास्त्रों का अच्चा ज्ञान आवश्यक है । दूसरे द्वादशा स्तोत्रोमे ऐसा नहि है और उन्मे सुललिता पदा प्रयोगा है । जिन्को संस्कृ भाषा का ज्ञान है, येह स्तोत्रों को समझने मे कठिनाई नहि होगा । इस स्तोत्र मै श्री नारायणा का रूपों का विवरण है और इस्से पूर्ण रूप मे समझ ने केलिये, तन्त्रसारा सङ्ग्रहा का ज्ञान भी अवश्य है । श्री हृषीकेश तीर्था का द्वादशा स्तोत्रों का हस्तलिपि मे २ स्तोत्रों एक संयुक्त भी हो चुके है । श्री नृसिंहा नखा स्तुति, जो पेहले एक अन्य सर्वमूला ग्रन्थ समझ गया था, द्वादशा स्तोत्रों मे पांचवां स्तोत्र है ।

॥ द्वादश स्तोत्राणि ॥

अथ प्रथमस्तोत्रम् (श्रीस्तुतिः)

विश्वस्थितिप्रलयसर्गमहाविभूति वृत्तिप्रकाशनियमावृति बन्धमोक्षाः ।
यस्या अपाङ्गलवमात्रत ऊर्जिता सा श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि ॥ १ ॥

ब्रह्मेशशक्ररविधर्मशशाङ्कपूर्व गीर्वाणसन्ततिरियं यदपाङ्गलेशम् ।
आश्रित्य विश्वविजयं विसृजत्यचिन्त्या श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि ॥ २ ॥

धर्मार्थकामसुमतिप्रचयाद्यशेषसन्मङ्गलं विदधते यदपाङ्गलेशम् ।
आश्रित्य तत्प्रणतसत्प्रणता अपीड्या श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि ॥ ३ ॥

षड्वर्गनिग्रहनिरस्तसमस्तदोषा ध्यायन्ति विष्णुमृषयो यदपाङ्गलेशम् ।
आश्रित्य यानपि समेत्य न याति दुःखं श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि ॥ ४ ॥

शेषाहिवैरिशिवशक्रमनुप्रधान चित्रोरुकर्मरचनं यदपाङ्गलेशम् ।
आश्रित्य विश्वमखिलं विदधाति धाता श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि ॥ ५ ॥

शक्रोग्रदीधितिहिमाकरसूर्यसूनु पूर्वं निहत्य निखिलं यदपाङ्गलेशम् ।
आश्रित्य नृत्यति शिवः प्रकटोरुशक्तिः श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि ॥ ६ ॥

तत्पादपङ्कजमहासनतामवाप शर्वादिवन्द्यचरणो यदपाङ्गलेशम् ।
आश्रित्य नागपतिः अन्यसुरैर्दुरापां श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि ॥ ७ ॥

नागारिरुग्रबलपौरुष आप विष्णुवाहत्वमुत्तमजवो यदपाङ्गलेशम् ।
आश्रित्य शक्रमुखदेवगणैः अचिन्त्यं श्रीर्यत्कटाक्षबलवत्यजितं नमामि ॥ ८ ॥

आनन्दतीर्थमुनिसन्मुखपङ्कजोत्थं साक्षाद्रमाहरिमनः प्रियमुत्तमार्थम् ।
भक्त्या पठत्यजितमात्मनि सन्निधाय यः स्तोत्रमेतभियाति तयोरभीष्टम् ॥ ९ ॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्यकृता श्रीस्तुतिः समाप्ता ॥

अथ द्वितीयस्तोत्रम्

वन्दे वन्द्यं सदानन्दं वासुदेवं निरञ्जनम् ।
इन्दिरापतिमाद्यादि वरदेश वरप्रदम् ॥ १ ॥

नमामि निखिलाधीश किरीटाघृष्टपीठवत् ।
हृत्तमश्शमनेऽर्काभं श्रीपतेः पादपङ्कजम् ॥ २ ॥

जाम्बूनदाम्बराधारं नितम्बं चिन्त्यमीशितुः ।
स्वर्णमञ्जीरसंवीतं आरूढं जगदम्बया ॥ ३ ॥

उदरं चिन्त्यं ईशस्य तनुत्वेऽपि अखिलम्भरम् ।
वलित्रयाङ्कितं नित्यं आरूढं श्रियैकया ॥ ४ ॥

स्मरणीयमुरो विष्णोरिन्दिरावासमुत्तमैः ।
अनन्तं अन्तवदिव भुजयोरन्तरङ्गतम् ॥ ५ ॥

शङ्खचक्रगदापद्मधराश्चिन्त्या हरेर्भुजाः ।
पीनवृत्ता जगद्रक्षा केवलोद्योगिनोऽनिशम् ॥ ६ ॥

सन्ततं चिन्तयेत्कण्ठं भास्वत्कौस्तुभभासकम् ।
वैकुण्ठस्याखिला वेदा उद्गीर्यन्तेऽनिशं यतः ॥ ७ ॥

स्मरेत यामिनीनाथ सहस्रामितकान्तिमत् ।
भवतापापनोदीड्यं श्रीपतेः मुखपङ्कजम् ॥ ८ ॥

पूर्णान्यसुखोद्भासिं अन्दस्मितमधीशितुः ।
गोविन्दस्य सदा चिन्त्यं नित्यानन्दपदप्रदम् ॥ ९ ॥

स्मरामि भवसन्ताप हानिदामृतसागरम् ।
पूर्णानन्दस्य रामस्य सानुरागावलोकनम् ॥ १० ॥

ध्यायेदजस्रमीशस्य पद्मजादिप्रतीक्षितम् ।
भ्रूभङ्गं पारमेष्ठ्यादि पददायि विमुक्तिदम् ॥ ११ ॥

सन्ततं चिन्तयेऽनन्तमन्तकाले विशेषतः ।
नैवोदापुः गृणन्तोऽन्तं यद्गुणानां अजादयः ॥ १२ ॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्य विरचितं द्वादशस्तोत्रेषु द्वितीयस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अथ तृतीयस्तोत्रम्

शङ्खचक्रगदापद्मशार्ङ्गखड्गधरं सदा ।
नमामि पितरं नित्यं वासुदेवं जगत् पतिम् ॥ १ ॥

सच्चिदानन्दरूपं तमनामयमनन्तरम् ।
एकमेकान्तमभयं विष्णुं विश्वहृदि स्थितम् ॥ २ ॥

नानास्वभावमत्यन्तस्वभावेन विचारितम् ।
अविशेषमनाद्यन्तं प्रणमामि सनातनम् ॥ ३ ॥

कुन्देन्दुसन्निभं वन्दे सुधारसन्निभं विभुम् ।
ज्ञानमुद्रापुस्तकारिशङ्खाक्षायुधधारिणम् ॥ ४ ॥

आनन्दमजरं नित्यमात्मेशममितद्युतिम् ।
वन्दे विश्वस्य पितरं विष्णुं विश्वेश्वरं सदा ॥ ५ ॥

अमन्दानन्दसन्दोहसन्तोषितजगत्रयम् ।
नारायणमणीयांसं वन्दे देवं सदातनम् ॥ ६ ॥

सूर्यमण्डलमद्भ्यस्थं वराभयकरोद्यतम् ।
सूर्यामितद्युतिं वन्दे नारायणमनामयम् ॥ ७ ॥

विश्वं विश्वाकरं वन्दे विश्वस्य प्रपितामहम् ।
नानारूपमजं नित्यं विश्वात्मानं प्रजापतिम् ॥ ८ ॥

कालाकालविचारादिप्रकालितसदातनम् ।
पुरुषं प्रकृतिस्थं च वन्दे विष्णुमजोत्तमम् ॥ ९ ॥

ब्रह्मणः पितरं वन्दे शङ्करस्य पितामहम् ।
श्रियः पतिमजं नित्यमिन्द्रादिप्रपितामहम् ॥ १० ॥

प्रतिप्रति स्थितं विष्णुं नित्यामृतमनामयम् ।
शङ्खचक्रधरं वन्दे वराभयकरोद्यतम् ॥ ११ ॥

प्रतापप्रविशेषेण दूरीकृतविदूषणम् ।
विदारितारिमत्यन्तप्रसन्नं प्रणमाम्यहम् ॥ १२ ॥

अप्रमेयमजं नित्यं विशालममृतं परम् ।
कृतनित्यालयं लोके नमस्यामि जगत् पतिम् ॥ १३ ॥

सुनित्यसुखमक्षय्यं शुद्धं शान्तं निरञ्जनम् ।
लोकालोकविचाराढ्यं नमस्यामि श्रियःपतिम् ॥ १४ ॥

अमन्दानन्दसन्दोहसान्द्रमिन्द्रानुजं परम् ।
नित्यावदातमेकान्तं प्रमाणातीतमक्षयम् ।
लोकालोकपतिं दिव्यं नमस्यामि रमापतिम् ॥ १५ ॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्यविरचितं द्वादशस्तोत्रेषु तृतीयस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥

अथ चतुर्थस्तोत्रम् (हरिस्तुतिः)

कुरु भुङ्क्ष्व च कर्म निजं नियतं हरिपादविनम्रधिया सततम् ।
हरिरेव परो हरिरेव गुरुः हरिरेव जगत्पितृमातृगतिः ॥ १ ॥

न ततोऽस्त्यपरं जगदीड्यतमं जगतीड्यतमं परमात्परतः पुरुषोत्तमतः ।
तदलं बहुलोकविचिन्तनया प्रवणं कुरु मानसमीशपदे ॥ २ ॥

यततोऽपि हरेः पदसंस्मरणे सकलं ह्यघमाशु लयं व्रजति ।
स्मरतस्तु विमुक्तिपदं परमं स्फुटमेष्यति तत्किमपाक्रियते ॥ ३ ॥

शृणुतामलसत्यवचः परमं शपथेरितं उच्छ्रितबाहुयुगम् ।
न हरेः परमो न हरेः सदृशः परमः स तु सर्वं चिदात्मगणात् ॥ ४ ॥

यदि नाम परो न भवेत् हरिः कथमस्य वशे जगदेतदभूत् ।
यदि नाम न तस्य वशे सकलं कथमेव तु नित्यसुखं न भवेत् ॥ ५ ॥

न च कर्मविमामल कालगुणप्रभृतीशमचित्तनु तद्धि यतः ।
चिदचित्तनु सर्वमसौ तु हरिर्यमयेदिति वैदिकमस्ति वचः ॥ ६ ॥

व्यवहारभिदाऽपि गुरोर्जगतां न तु चित्तगता स हि चोद्यपरम् ।
बहवः पुरुषाः पुरुषप्रवरो हरिरित्यवदस्त्वयमेव हरिः ॥ ७ ॥

चतुराननपूर्वविमुक्तगणा हरिमेत्य तु पूर्ववदेव सदा ।
नियतोच्चविनीचतयैव निजां स्थितिमापुरिति स्म परं वचनम् ॥ ८ ॥

आनन्दतीर्थसन्नाम्ना पूर्णप्रज्ञाभिधायुजा ।
कृतं हर्यष्टकं भक्त्या पठतः प्रीयते हरिः ॥ ९ ॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्य विरचितं द्वादशस्तोत्रेषु चतुर्थस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥

[हरिस्तुतिः समाप्ता ।]

श्री नृसिंह नख स्तुति



अथ पञ्चमस्तोत्रम् (श्रीनृसिंहनखरस्तुतिः)

ॐ ॥ रामोऽखिलानन्दतनुः स एव भीमोऽतिपापेषु दुरन्तवीर्यः ।
कामः स एवाजितकामिनीषु सोमः स एवाऽत्मपदाश्रितेषु ॥

© Copyrights 2022-26 Achyuta Bhakti Deets

पान्त्वस्मान् पुरुहूतवैरिबलवन्मातङ्गमाद्यद्घटाकुम्भोच्चाद्रिविपाटनाधिकपटुप्रत्येकवज्रायिताः ।
श्रीमत्कण्ठीरवास्यप्रततसुनखरा दारितारातिदूर प्रध्वस्तध्वान्तशान्तप्रविततमनसा भाविता भूरिभागैः ॥ १
॥

लक्ष्मीकान्त समन्ततोऽपि कलयन् नैवेशितुस्ते समं पश्याम्युत्तमवस्तु दूरतरतोऽपास्तं रसो योऽष्टमः ।
यद्रोषोत्करदक्षनेत्रकुटिलप्रान्तोत्थिताग्निस्फुरत्खद्योतोपमविस्फुलिङ्गभसिता ब्रह्मेशशक्रोत्कराः ॥ २ ॥
इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्यकृता श्रीनृसिंहनखरस्तुतिः समाप्ता ॥

अथ षष्ठस्तोत्रम्

वन्दिताशेषवन्द्योरुवृन्दारकं चन्दनाचर्चितोदारपीनांसकम् ।
इन्दिराचञ्चलापाङ्गनीराजितं मन्दरोद्धारिवृत्तोद्भुजाभोगिनम् ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ १ ॥

सृष्टिसंहारलीलाविलासाततं पुष्टषाड्गुण्यसद्विग्रहोल्लासिनम् ।
दुष्टनिःशेषसंहारकर्माद्यतं हृष्टपुष्टातिशिष्ट प्रजासंश्रयम् ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ २ ॥

उन्नतप्रार्थिताशेषसंसाधकं सन्नतालौकिकानन्ददश्रीपदम् ।
भिन्नकर्माशयप्राणिसम्प्रेरकं तन्न किं नेति विद्वत्सु मीमांसितम् ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ ३ ॥

विप्रमुख्यैः सदा वेदवादोन्मुखैः सुप्रतापैः क्षितीशेश्वरैश्चार्चितम् ।
अप्रतर्क्योरुसंविद्गुणं निर्मलं सप्रकाशाजरानन्दरूपं परम् ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ ४ ॥

अत्ययो यस्य केनापि न कापि हि प्रत्ययो यद्गुणेषूत्तमानां परः ।
सत्यसङ्कल्प एको वरेण्यो वशी मत्यनूनैः सदा वेदवादोदितः ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ ५ ॥

पश्यतां दुःखसन्ताननिर्मूलनं दृश्यतां दृश्यतामित्यजेशार्चितम् ।
नश्यतां दूरगं सर्वदाप्याऽत्मगं वश्यतां स्वेच्छया सज्जनेष्वागतम् ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ ६ ॥

अग्रजं यः ससर्जाजमग्न्याकृतिं विग्रहो यस्य सर्वे गुणा एव हि ।
उग्र आद्योऽपि यस्यात्मजाग्न्यात्मजः सद्गृहीतः सदा यः परं दैवतम् ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ ७ ॥

अच्युतो यो गुणैर्नित्यमेवाखिलैः प्रच्युतोऽशेषदोषैः सदा पूर्तितः ।
उच्यते सर्ववेदोरुवादैरजः स्वर्चितो ब्रह्मरुद्रेन्द्रपूर्वैः सदा ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ ८ ॥

धार्यते येन विश्वं सदाजादिकं वार्यतेऽशेषदुःखं निजध्यायिनाम् ।
पार्यते सर्वमन्यैर्नयत्यार्यते कार्यते चाखिलं सर्वभूतैः सदा ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ ९ ॥

सर्वपापानियत्संस्मृतेः सङ्ख्यं सर्वदा यान्ति भक्त्या विशुद्धात्मनाम् ।
शर्वगुर्वादिगीर्वाण संस्थानदः कुर्वते कर्म यत्प्रीतये सज्जनाः ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ १० ॥

अक्षयं कर्म यस्मिन् परे स्वर्पितं प्रक्षयं यान्ति दुःखानि यन्नामतः ।
अक्षरो योऽजरः सर्वदैवामृतः कुक्षिगं यस्य विश्वं सदाऽजादिकम् ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ ११ ॥

नन्दितीर्थोरुसन्नामिनो नन्दिनः सन्दधानाः सदानन्ददेवे मतिम् ।
मन्दहासारुणा पाङ्गदत्तोन्नतिं वन्दिताशेषदेवादिवृन्दं सदा ।
प्रीणयामो वासुदेवं देवतामण्डलाखण्डमण्डनं प्रीणयामो वासुदेवम् ॥ १२ ॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्य विरचितं द्वादशस्तोत्रेषु षष्ठस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥

अथ सप्तमस्तोत्रम्

देवकिनन्दन नन्दकुमारा वृन्दावनाञ्जन गोकुलचन्द्र ॥ १ ॥

कन्दफलाशन सुन्दररूपा नन्दितगोकुल वन्दितपाद ॥ २ ॥

इन्द्रसुतावक नन्दकहस्ता चन्दनचर्चित सुन्दरिनाथ ॥ ३ ॥

इन्दीवरोदरदलनयनाऽऽ मन्दरधारा गोविन्द वन्दे ॥ ४ ॥

मत्स्यकरूप लयोदविहारिन् वेदविनेत्र चतुर्मुखवन्द्य ॥ ५ ॥

कूर्मस्वरूपक मन्दरधारिन् लोकविधारक देववरेण्य ॥ ६ ॥

सूकररूपक दानवशत्रो भूमिविधारक यज्ञावराङ्ग ॥ ७ ॥

देव नृसिंह हिरण्यकशत्रो सर्व भयान्तक दैवतबन्धो ॥ ८ ॥

वामन वामन माणववेष दैत्यवरान्तक कारणभूत ॥ ९ ॥

रामभृगूद्वह सूर्जितदीप्ते क्षत्रकुलान्तक शम्भुवरेण्य ॥ १० ॥

राघव राघव राक्षसशत्रो मारुतिवल्लभ जानकिकान्त ॥ ११ ॥

देवकिनन्दन सुन्दररूप रुक्मिणिवल्लभ पाण्डवबन्धो ॥ १२ ॥

दैत्यविमोहक नित्यसुखादे देवविबोधक बुद्धस्वरूप ॥ १३ ॥

दुष्टकुलान्तक कल्किस्वरूपा धर्मविवर्धन मूलयुगादे ॥ १४ ॥

आनन्दतीर्थकृता हरिगाथा पापहरा शुभनित्यसुखार्था ॥ १५ ॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्य विरचितं द्वादशस्तोत्रेषु सप्तमस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥

अथ अष्टमस्तोत्रं

अतिमततमोगिरिसमितिविभेदन पितामहभूतिद गुणगणनिलय ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ १ ॥

विधिभवमुखसुरसततसुवन्दितरमामनोवल्लभ भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ २ ॥

अगणितगुणगणमयशरीर हे विगतगुणेतर भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ ३ ॥

अपरिमितसुखनिधिविमलसुदेह हे विगत सुखेतर भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ ४ ॥

प्रचलितलयजलविहरण शाश्वतसुखमयमीन हे भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ ५ ॥

सुरदितिजसुबलविलुळितमन्दरधर पर कूर्म हे भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ ६ ॥

सगिरिवरधरातळवह सुसूकरपरमविबोध हे भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ ७ ॥

अतिबलदिति सुत हृदय विभेदन जयनृहरेऽमल भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ ८ ॥

बलिमुखदिति सुतविजयविनाशन जगदवनाजित भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ ९ ॥

अविजितकुनृपतिसमितिविखण्डन रमावर वीरप भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ १० ॥

खरतरनिशिचरदहन परामृत रघुवर मानद भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ ११ ॥

सुललिततनुवर वरद महाबल यदुवर पार्थप भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ १२ ॥

दिति सुतविमोहन विमलविबोधन परगुणबुद्ध हे भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ १३ ॥

कलिमलहुतवह सुभग महोत्सव शरणद कल्कीश भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ १४ ॥

अखिलजनवलय परसुखकारण परपुरुषोत्तम भव मम शरणम् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ १५ ॥
इति तव नुतिवरसततरतेर्भव सुशरणमुरुसुखतीर्थमुनेः भगवन् ।
शुभतम कथाशय परमसदोदित जगदेककारण रामरमारमण ॥ १६ ॥
इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्य विरचितं द्वादशस्तोत्रेषु अष्टमस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अथ नवमस्तोत्रम्

केशव केशव शासक वन्दे पाशधरार्चित शूरपेश ।
नारायणामलतारण वन्दे कारणकारण पूर्ण वरेण्य ॥ १ ॥

माधव माधव शोधक वन्दे बाधक बोधक शुद्धसमाधे ।
गोविन्द गोविन्द पुरन्दर वन्दे स्कन्दसनन्दनवन्दितपाद ॥ २ ॥

विष्णु सृजिष्णु ग्रसिष्णो विवन्दे कृष्ण सदुष्णवधिष्णो सुधृष्णो ।
मधुसूदन दानवसादन वन्दे दैवतमोदन वेदितपाद ॥ ३ ॥

त्रिविक्रम निष्क्रम विक्रम वन्दे सुक्रम सङ्क्रमहुङ्कृतवक्त्र ।
वामन वामन भामन वन्दे सामन सीमन शामन सानो ॥ ४ ॥

श्रीधर श्रीधर शन्धर वन्दे भूर्धर वार्धर कन्धरधारिन् ।
हृषीकेश सुकेश पेश विवन्दे शरणेश कलेश बलेश सुखेश ॥ ५ ॥

पद्मनाभ शुभोद्भव वन्दे सम्भृतलोकभराभर भूरे ।
दामोदर दूरतरान्तर वन्दे दारितपारक पार परस्मात् ॥ ६ ॥

आनन्दसुतीर्थ मुनीन्द्रकृता हरिगीतिरियं परमादरतः ।
परलोकविलोकन सूर्यनिभा हरिभक्ति विवर्धन शौण्डतमा ॥ ७ ॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्य विरचितं द्वादशस्तोत्रेषु नवमस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अथ दशमस्तोत्रम्

अवनश्रीपतिरप्रतिरधिकेशादिभवादे ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ १ ॥

सुरवन्द्याधिप सद्वरभरिताशेषगुणालम् ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ २ ॥

सकलध्वान्तविनाशन परमानन्दसुधाहो ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ ३ ॥

त्रिजगत्पोत सदार्चितचरणाशापतिधातो ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ ४ ॥

त्रिगुणातीतविधारक परितो देहि सुभक्तिम् ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ ५ ॥

शरणं कारणभावन भव मे तात सदाऽलम् ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ ६ ॥

मरणप्राणद पालक जगदीशाव सुभक्तिम् ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ ७ ॥

तरुणादित्यसवर्णकचरणाब्जामल कीर्ते ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ ८ ॥

सलिलप्रोत्थसरागकमणिवर्णोच्चनखादे ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ ९ ॥

कजतूणीनिभपावनवरजङ्घामितशक्ते ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ १० ॥

इबहस्तप्रभशोभनपरमोरुस्थरमाळे ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ ११ ॥

असनोत्फुल्लसुपुष्पकसमवर्णावरणान्ते ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ १२ ॥

शतमोदोद्भवसुन्दरिवरपद्मोत्थितनाभे ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ १३ ॥

जगदागूहकपल्लवसमकुक्षे शरणादे ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ १४ ॥

जगदम्बामलसुन्दरिगृहवक्षोवर योगिन् ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ १५ ॥

दितिजान्तप्रद चक्रधरगदायुग्वरबाहो ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ १६ ॥

परमज्ञानमहानिधिवदन श्रीरमणेन्दो ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ १७ ॥

निखिलाघौघविनाशकपरसौख्यप्रददृष्टे ।
करुणापूर्णवरप्रदचरितं ज्ञापय मे ते ॥ १८ ॥

परमानन्दसुतीर्थसुमुनिराजो हरिगाथाम् ।
कृतवान्नित्यसुपूर्णकपरमानन्दपदैषिन् ॥ १९ ॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्य विरचितं द्वादशस्तोत्रेषु दशमस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अथ एकादशस्तोत्रम्

उदीर्णमजरं दिव्यं अमृतस्यन्द्यधीशितुः ।
आनन्दस्य पदं वन्दे ब्रह्मेन्द्रादि अभिवन्दितम् ॥ १ ॥

सर्ववेदपदोद्गीतमिन्दिराधारमुत्तमम् ।
आनन्दस्य पदं वन्दे ब्रह्मेन्द्रादि अभिवन्दितम् ॥ २ ॥

सर्वदेवादिदेवस्य विदारितमहत्तमः ।
आनन्दस्य पदं वन्दे ब्रह्मेन्द्रादि अभिवन्दितम् ॥ ३ ॥

उदारमादरान्नित्यं अनिन्द्यं सुन्दरीपतेः ।
आनन्दस्य पदं वन्दे ब्रह्मेन्द्रादि अभिवन्दितम् ॥ ४ ॥

इन्दीवरोदरनिभं सुपूर्णं वादिमोहनम् ।
आनन्दस्य पदं वन्दे ब्रह्मेन्द्रादि अभिवन्दितम् ॥ ५ ॥

दातृसर्वामरैश्वर्यविमुक्त्यादेरहो वरम् ।
आनन्दस्य पदं वन्दे ब्रह्मेन्द्रादि अभिवन्दितम् ॥ ६ ॥

दूराद्दुरतरं यत्तु तदेवान्तिकमन्तिकात् ।
आनन्दस्य पदं वन्दे ब्रह्मेन्द्रादि अभिवन्दितम् ॥ ७ ॥

पूर्णसर्वगुणैकार्णमनाद्यन्तं सुरेशितुः ।
आनन्दस्य पदं वन्दे ब्रह्मेन्द्रादि अभिवन्दितम् ॥ ८ ॥

आनन्दतीर्थमुनिना हरेरानन्दरूपिणः ।
कृतं स्तोत्रमिदं पुण्यं पठन्नानन्दमाप्नुयात् ॥ ९ ॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्यविरचितं द्वादशस्तोत्रेषु एकादशस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

अथ द्वादशस्तोत्रम्

आनन्दमुकुन्द अरविन्दनयन ।
आनन्दतीर्थपरानन्दवरद ॥ १ ॥

सुन्दरीमन्दिरगोविन्द वन्दे ।
आनन्दतीर्थपरानन्दवरद ॥ २ ॥

चन्द्रकमन्दिरनन्दक वन्दे ।
आनन्दतीर्थपरानन्दवरद ॥ ३ ॥

चन्द्रसुरेन्द्रसुवन्दित वन्दे ।
आनन्दतीर्थपरानन्दवरद ॥ ४ ॥

वृन्दारवृन्दसुवन्दित वन्दे ।
आनन्दतीर्थपरानन्दवरद ॥ ५ ॥

मन्दिरस्यन्दनस्यन्दक वन्दे ।
आनन्दतीर्थपरानन्दवरद ॥ ६ ॥

इन्दिराऽनन्दक सुन्दर वन्दे ।
आनन्दतीर्थपरानन्दवरद ॥ ७ ॥

मन्दारस्यन्दितमन्दिर वन्दे ।
आनन्दतीर्थपरानन्दवरद ॥ ८ ॥

आनन्दचन्द्रिकास्यन्दक वन्दे ।
आनन्दतीर्थपरानन्दवरद ॥ ९ ॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्य विरचितं द्वादशस्तोत्रेषु द्वादशं स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

॥ श्रीभारतीरमणमुख्यप्राणान्तर्गत श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥

४. श्री विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र

॥ श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् ॥



परिचय

विष्णु सहस्रनाम श्री विष्णु का एक स्तोत्र है, जिसमें श्री विष्णु का १००८ नाम हैं। इसे कुरुक्षेत्र में भीष्म ने अपने हृदय में श्री विष्णु के आवेश के माध्यम से गाया था। यह स्तोत्र महाभारत के अनुशासन पर्व के २५४वें अध्याय में आता है। पद्म पुराण, स्कंद पुराण और गरुड़ पुराण में इसका अन्य संस्करण भी हैं, हालांकि महाभारत संस्करण पर अधिकांश आचार्यों ने टिप्पणी की है। इसमें यह तीन खंडों हैं, जिनमें से सभी एक ही स्रोत से नहीं हैं:

- **पूर्वपीठिका:** यह खंड भीष्म स्तोत्र का उच्चारण करने से पहले आता है और होते हुए स्तिथि के बारे में बताता है।
- **स्तोत्र:** यह वास्तविक स्तोत्र है जिसका उच्चारण करना चाहिए, जिसमें श्री हरि के १००८ नामों का उल्लेख है। भगवान के वास्तव में अनंत नाम हैं और उन्हें ब्रह्मांड का हर ध्वनि से उसको ही दर्शाया गया है। यह शास्त्रों में कहा गया है। श्रीपाद मध्वाचार्य ने एक बार उल्लेख किया था कि कैसे वास्तव में विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र के १०० प्रकार के अर्थ हैं और उनकी कई व्याख्याएँ हैं।
- **उत्तरपीठिका:** यह विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र के बाद महाभारत का निरंतरता है। यहाँ विष्णु सहस्रनाम का फलश्रुति भी बताया गया है और कुछ दुसरे श्लोकों भी है।

विष्णु सहस्रनाम का जाप करने से श्री विष्णु हमारी आत्मा में अन्तर्यामी के रूप में प्रकट होते हैं और उनके गुणों का एक अंश हमारे भीतर प्रकट होता है। जीवों या जीवित संस्थाओं की तुलना परमात्मा के प्रतिबिंबों से की जा सकती है। हम उन पर निर्भर हैं, क्योंकि उनके बिना हमारा कोई अलग अस्तित्व नहीं है और हम सभी मामलों में उनके अधीन हैं। हालाँकि, उनके प्रतिबिंब होने के कारण, जीवों में ईश्वर के कुछ गुण होते हैं, जो अत्यंत सीमित मात्रा में होते हैं, जो कि तारतम्य (जीवों के पदानुक्रम) में जीव की स्थिति पर निर्भर करता है।

अपनी आत्मा में निवास करने वाले परमात्मा का आह्वान करके हम इन गुणों को आंशिक रूप से, अल्प मात्रा में प्रकट कर सकते हैं और अपने आप को, विशेष रूप से आध्यात्मिक रूप से, बेहतर बना सकते हैं। यही विष्णु सहस्रनाम का उद्देश्य है जो परब्रह्म के विभिन्न नामों का गुणगान करता है, जो उनके कुछ गुणों को इंगित करते हैं। श्री मध्वाचार्य ने एक बार कई विद्वानों की एक सभा में उल्लेख किया था कि विष्णु सहस्रनाम में वास्तव में १०० प्रकार के अर्थ और व्याख्याएँ हैं। जब उन्होंने श्री विष्णु के कुछ नामों की व्याख्या करना शुरू किया, तो विद्वानों को एहसास हुआ कि वे श्रीमद आचार्य की व्याख्या को समझने में पूरी तरह से असमर्थ थे, क्योंकि यह उनकी बौद्धिक क्षमता से परे था। यह है भगवत नामा की अनंत महिमा।

मूलपाठः/पूर्वपीठिका

ॐ सकलसौभाग्यदायकं श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् ॥

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ १ ॥

यस्य द्विरदवक्त्राद्याः पारिषद्याः परः शतम् ।
विघ्नं निघ्नन्ति सततं विष्वक्सेनं तमाश्रये ॥ २ ॥

व्यासं वसिष्ठनप्तारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम् ।
पराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम् ॥ ३ ॥

व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे ।
नमो वै ब्रह्मनिधये वासिष्ठाय नमो नमः ॥ ४ ॥

अविकाराय शुद्धाय नित्याय परमात्मने ।
सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्वजिष्णवे ॥ ५ ॥

यस्य स्मरणमात्रेण जन्मसंसारबन्धनात् ।
विमुच्यते नमस्तस्मै विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ ६ ॥

ॐ नमो विष्णवे प्रभविष्णवे ।

श्रीवैशम्पायन उवाच

श्रुत्वा धर्मानशेषेण पावनानि च सर्वशः ।
युधिष्ठिरः शान्तनवं पुनरेवाभ्यभाषत ॥ ७ ॥

युधिष्ठिर उवाच

किमेकं दैवतं लोके किं वाप्येकं परायणम् ।
स्तुवन्तः कं कर्मन्तः प्राप्नुयुर्मानवाः शुभम् ॥ ८ ॥

को धर्मः सर्वधर्माणां भवतः परमो मतः ।
किं जपन्मुच्यते जन्तुर्जन्मसंसारबन्धनात् ॥ ९ ॥

भीष्म उवाच

जगत्प्रभुं देवदेवमनन्तं पुरुषोत्तमम् ।
स्तुवन् नामसहस्रेण पुरुषः सततोत्थितः ॥ १० ॥

तमेव चार्चयन्नित्यं भक्त्या पुरुषमव्ययम् ।
ध्यायन् स्तुवन् नमस्यंश्च यजमानस्तमेव च ॥ ११ ॥

अनादिनिधनं विष्णुं सर्वलोकमहेश्वरम् ।
लोकाध्यक्षं स्तुवन्नित्यं सर्वदुःखातिगो भवेत् ॥ १२ ॥

ब्रह्मण्यं सर्वधर्मज्ञं लोकानां कीर्तिवर्धनम् ।
लोकनाथं महद्भूतं सर्वभूतभवोद्भवम् ॥ १३ ॥

एष मे सर्वधर्माणां धर्मोऽधिकतमो मतः ।
यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेत्रः सदा ॥ १४ ॥

परमं यो महत्तेजः परमं यो महत्तपः ।
परमं यो महद्ब्रह्म परमं यः परायणम् ॥ १५ ॥

पवित्राणां पवित्रं यो मङ्गलानां च मङ्गलम् ।
दैवतं दैवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिता ॥ १६ ॥

यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे ।
यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये ॥ १७ ॥

तस्य लोकप्रधानस्य जगन्नाथस्य भूपते ।
विष्णोर्नामसहस्रं मे शृणु पापभयापहम् ॥ १८ ॥

यानि नामानि गौणानि विख्यातानि महात्मनः ।
ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि भूतये ॥ १९ ॥

ऋषिर्नाम्नां सहस्रस्य वेदव्यासो महामुनिः ।
छन्दोऽनुष्टुप् तथा देवो भगवान् देवकीसुतः ॥ २० ॥

अमृतांशूद्भवो बीजं शक्तिर्देवकिनन्दनः ।
त्रिसामा हृदयं तस्य शान्त्यर्थे विनियोज्यते ॥ २१ ॥

विष्णुं जिष्णुं महाविष्णुं प्रभविष्णुं महेश्वरम् ।

न्यास

ॐ अस्य श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रमहामन्त्रस्य ।

श्री भगवान् वेदव्यास ऋषिः ।

अनुष्टुप् छन्दः ।

श्रीमहाविष्णुः परमात्मा आन्तर्यामि देवता । (अथवा श्रीभारतीरमण मुख्यप्राणान्तर्गत श्रीमहाविष्णुः परमात्मा आन्तर्यामि देवता)

श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्र पारायणेन विनियोगः ॥

एक मुख्य मन्त्र या स्तोत्र का पारायण करनेसे पहले, न्यासा करना चाहिए । एक मन्त्रको चार गुणों होते हैं – उसको रचित करनेवाला या वोह मिलनेवाला ऋषि, उसका छंदस या उच्चारण का तरीका, वोह मन्त्र का देवता और उसका विनियोगा, यानि पारायण का प्रयोजन । इन सबको बताना को न्यासा कहा जाता है ।

ऋषि का नाम बोलते (यहा 'श्री भगवान वेदव्यासा ऋषिः..'), अपना दांया हाथ को अपना सर पे रखिये । छंदस केलिये मूह पर और देवता केलिये छाती पर ।

न्यास के बाद, ध्यान श्लोक या मन्त्र को केहना चाहिये, जो उस देवता का रूप को बतात है, ताकि मन मे उसका ध्यान होसक्ता है ।

ध्यान

अथ ध्यानम्

क्षीरोदन्वत्प्रदेशे शुचिमणिविलसत्सैकतेमौक्तिकानां मालाकृप्तासनस्थः

स्फटिकमणिनिभैमौक्तिकैर्मण्डिताङ्गः ।

शुभ्रैरभ्रैरदभ्रैरुपरिविरचितैर्मुक्तपीयूष वर्षैः आनन्दी नः पुनीयादरिनलिनगदा शङ्खपाणिर्मुकुन्दः ॥ १ ॥

भूः पादौ यस्य नाभिर्वियदसुरनिलश्चन्द्र सूर्यौ च नेत्रे कर्णावाशाः शिरो द्यौर्मुखमपि दहनो यस्य वास्तेयमब्धिः ।

अन्तःस्थं यस्य विश्वं सुरनरखगगोभोगिगन्धर्वदैत्यैः चित्रं रंरम्यते तं त्रिभुवन वपुषं विष्णुमीशं नमामि ॥ २ ॥

ॐ शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥ ३ ॥

मेघश्यामं पीतकौशेयवासं श्रीवत्साङ्गं कौस्तुभोद्भासिताङ्गम् ।
पुण्योपेतं पुण्डरीकायताक्षं विष्णुं वन्दे सर्वलोकैकनाथम् ॥ ४ ॥

नमः समस्तभूतानामादिभूताय भूभृते ।

अनेकरूपरूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ ५ ॥

सशङ्खचक्रं सकिरीटकुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम् ।
सहारवक्षःस्थलकौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ॥ ६ ॥

छायायां पारिजातस्य हेमसिंहासनोपरि आसीनमम्बुदश्याममायताक्षमलंकृतम् ।
चन्द्राननं चतुर्बाहुं श्रीवत्साङ्कित वक्षसं रुक्मिणी सत्यभामाभ्यां सहितं कृष्णमाश्रये ॥ ७ ॥

स्तोत्र

॥ हरिः ॐ ॥

ओं विश्वं विष्णुर्वषट्कारो भूतभव्यभवत्प्रभुः ।
भूतकृद्भूतभृद्भावो भूतात्मा भूतभावनः ॥ १ ॥

पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः ।
अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च ॥ २ ॥

योगो योगविदां नेता प्रधानपुरुषेश्वरः ।
नारसिंहवपुः श्रीमान् केशवः पुरुषोत्तमः ॥ ३ ॥

सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः ।
संभवो भावनो भर्ता प्रभवः प्रभुरीश्वरः ॥ ४ ॥

स्वयंभूः शम्भुरादित्यः पुष्कराक्षो महास्वनः ।
अनादिनिधनो धाता विधाता धातुरुत्तमः ॥ ५ ॥

अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः ।
विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः ॥ ६ ॥

अग्राह्यः शाश्वतः कृष्णो लोहिताक्षः प्रतर्दनः ।
प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मङ्गलं परम् ॥ ७ ॥

ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः ।
हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूदनः ॥ ८ ॥

ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः ।
अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान् ॥ ९ ॥

सुरेशः शरणं शर्म विश्वरेताः प्रजाभवः ।
अहः संवत्सरो व्यालः प्रत्ययः सर्वदर्शनः ॥ १० ॥

अजः सर्वेश्वरः सिद्धः सिद्धिः सर्वादिरच्युतः ।
वृषाकपिरमेयात्मा सर्वयोगविनिःसृतः ॥ ११ ॥

वसुर्वसुमनाः सत्यः समात्माऽसम्मितः समः ।
अमोघः पुण्डरीकाक्षो वृषकर्मा वृषाकृतिः ॥ १२ ॥

रुद्रो बहुशिरा बभ्रुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः ।
अमृतः शाश्वत स्थाणुर्वरारोहो महातपाः ॥ १३ ॥

सर्वगः सर्वविद्भानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः ।
वेदो वेदविदव्यङ्गो वेदाङ्गो वेदवित् कविः ॥ १४ ॥

लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः ।
 चतुरात्मा चतुर्व्यूहश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः ॥ १५ ॥
 भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः ।
 अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः ॥ १६ ॥
 उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरूर्जितः ।
 अतीन्द्रः संग्रहः सर्गो धृतात्मा नियमो यमः ॥ १७ ॥
 वेद्यो वैद्यः सदायोगी वीरहा माधवो मधुः ।
 अतीन्द्रियो महामायो महोत्साहो महाबलः ॥ १८ ॥
 महाबुद्धिर्महावीर्यो महाशक्तिर्महाद्युतिः ।
 अनिर्देश्यवपुः श्रीमानमेयात्मा महाद्रिधृक् ॥ १९ ॥
 महेष्वासो महीभर्ता श्रीनिवासः सतां गतिः ।
 अनिरुद्धः सुरानन्दो गोविन्दो गोविदां पतिः ॥ २० ॥
 मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः ।
 हिरण्यनाभः सुतपाः पद्मनाभः प्रजापतिः ॥ २१ ॥
 अमृत्युः सर्वदृक् सिंहः सन्धाता सन्धिमान् स्थिरः ।
 अजो दुर्मर्षणः शास्ता विश्रुतात्मा सुरारिहा ॥ २२ ॥
 गुरुर्गुरुतमो धाम सत्यः सत्यपराक्रमः ।
 निमिषोऽनिमिषः स्रग्वी वाचस्पतिरुदारधीः ॥ २३ ॥
 अग्रणीर्ग्रामणीः श्रीमान् न्यायो नेता समीरणः ।
 सहस्रमूर्धा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ २४ ॥
 आवर्तनो निवृत्तात्मा संवृतः संप्रमर्दनः ।
 अहः संवर्तको वह्निरनिलो धरणीधरः ॥ २५ ॥
 सुप्रसादः प्रसन्नात्मा विश्वधृग्विश्वभुग्विभुः ।
 सत्कर्ता सत्कृतः साधुर्जहनुर्नारायणो नरः ॥ २६ ॥
 असंख्येयोऽप्रमेयात्मा विशिष्टः शिष्टकृच्छुचिः ।
 सिद्धार्थः सिद्धसङ्कल्पः सिद्धिदः सिद्धिसाधनः ॥ २७ ॥
 वृषाही वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोदरः ।
 वर्धनो वर्धमानश्च विविक्तः श्रुतिसागरः ॥ २८ ॥
 सुभुजो दुर्धरो वाग्मी महेन्द्रो वसुदो वसुः ।
 नैकरूपो बृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः ॥ २९ ॥

ओजस्तेजोद्युतिधरः प्रकाशात्मा प्रतापनः ।
 ऋद्धः स्पष्टाक्षरो मन्त्रश्चन्द्रांशुर्भास्करद्युतिः ॥ ३० ॥
 अमृतांशूद्रवो भानुः शशबिन्दुः सुरेश्वरः ।
 औषधं जगतः सेतुः सत्यधर्मपराक्रमः ॥ ३१ ॥
 भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः ।
 कामहा कामकृत्कान्तः कामः कामप्रदः प्रभुः ॥ ३२ ॥
 युगादिकृद्युगावर्तो नैकमायो महाशनः ।
 अदृश्यो व्यक्तरूपश्च सहस्रजिदनन्तजित् ॥ ३३ ॥
 इष्टोऽविशिष्टः शिष्टेष्टः शिखण्डी नहुषो वृषः ।
 क्रोधहा क्रोधकृत्कर्ता विश्वबाहुर्महीधरः ॥ ३४ ॥
 अच्युतः प्रथितः प्राणः प्राणदो वासवानुजः ।
 अपांनिधिरधिष्ठानमप्रमत्तः प्रतिष्ठितः ॥ ३५ ॥
 स्कन्दः स्कन्दधरो धुर्यो वरदो वायुवाहनः ।
 वासुदेवो बृहद्भानुरादिदेवः पुरन्दरः ॥ ३६ ॥
 अशोकस्तारणस्तारः शूरः शौरिर्जनेश्वरः ।
 अनुकूलः शतावर्तः पद्मी पद्मनिभेक्षणः ॥ ३७ ॥
 पद्मनाभोऽरविन्दाक्षः पद्मगर्भः शरीरभृत् ।
 महर्द्धिर्द्वो वृद्धात्मा महाक्षो गरुडध्वजः ॥ ३८ ॥
 अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः ।
 सर्वलक्षणलक्षण्यो लक्ष्मीवान् समितिञ्जयः ॥ ३९ ॥
 विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः ।
 महीधरो महाभागो वेगवानमिताशनः ॥ ४० ॥
 उद्भवः क्षोभणो देवः श्रीगर्भः परमेश्वरः ।
 करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः ॥ ४१ ॥
 व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदो ध्रुवः ।
 परर्द्धिः परमस्पष्टस्तुष्टः पुष्टः शुभेक्षणः ॥ ४२ ॥
 रामो विरामो विरजो मार्गो नेयो नयोऽनयः ।
 वीरः शक्तिमतां श्रेष्ठो धर्मो धर्मविदुत्तमः ॥ ४३ ॥
 वैकुण्ठः पुरुषः प्राणः प्राणदः प्रणवः पृथुः ।
 हिरण्यगर्भः शत्रुघ्नो व्याप्तो वायुरधोक्षजः ॥ ४४ ॥

ऋतुः सुदर्शनः कालः परमेष्ठी परिग्रहः ।
 उग्रः संवत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः ॥ ४५ ॥
 विस्तारः स्थावरस्थाणुः प्रमाणं बीजमव्ययम् ।
 अर्थोऽनर्थो महाकोशो महाभोगो महाधनः ॥ ४६ ॥
 अनिर्विण्णः स्थविष्ठोऽभूर्धर्मयूपो महामखः ।
 नक्षत्रनेमिर्नक्षत्री क्षमः क्षामः समीहनः ॥ ४७ ॥
 यज्ञ इज्यो महेज्यश्च ऋतुः सत्रं सतां गतिः ।
 सर्वदर्शी विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम् ॥ ४८ ॥
 सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः सुघोषः सुखदः सुहृत् ।
 मनोहरो जितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः ॥ ४९ ॥
 स्वापनः स्ववशो व्यापी नैकात्मा नैककर्मकृत् ।
 वत्सरो वत्सलो वत्सी रत्नगर्भो धनेश्वरः ॥ ५० ॥
 धर्मगुब्धर्मकृद्भर्मी सदसत्क्षरमक्षरम् ।
 अविज्ञाता सहस्रांशुर्विधाता कृतलक्षणः ॥ ५१ ॥
 गभस्तिनेमिः सत्त्वस्थः सिंहो भूतमहेश्वरः ।
 आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद्गुरुः ॥ ५२ ॥
 उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः ।
 शरीरभूतभृद्भोक्ता कपीन्द्रो भूरिदक्षिणः ॥ ५३ ॥
 सोमपोऽमृतपः सोमः पुरुजित्पुरुसत्तमः ।
 विनयो जयः सत्यसंधो दाशार्हः सात्त्वतांपतिः ॥ ५४ ॥
 जीवो विनयिता साक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः ।
 अम्भोनिधिरनन्तात्मा महोदधिशयोऽन्तकः ॥ ५५ ॥
 अजो महार्हः स्वाभाव्यो जितामित्रः प्रमोदनः ।
 आनन्दो नन्दनो नन्दः सत्यधर्मा त्रिविक्रमः ॥ ५६ ॥
 महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपतिः ।
 त्रिपदस्त्रिदशाध्यक्षो महाशृङ्गः कृतान्तकृत् ॥ ५७ ॥
 महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकाङ्गदी ।
 गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः ॥ ५८ ॥
 वेधाः स्वाङ्गोऽजितः कृष्णो दृढः सङ्कर्षणोऽच्युतः ।
 वरुणो वारुणो वृक्षः पुष्कराक्षो महामनाः ॥ ५९ ॥

भगवान् भगहाऽऽनन्दी वनमाली हलायुधः ।
आदित्यो ज्योतिरादित्यः सहिष्णुर्गतिसत्तमः ॥ ६० ॥

सुधन्वा खण्डपरशुर्दारुणो द्रविणप्रदः ।
दिवःस्पृक् सर्वदृग्व्यासो वाचस्पतिरयोनिजः ॥ ६१ ॥

त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिषक् ।
संन्यासकृच्छ्रमः शान्तो निष्ठा शान्तिः परायणम् ॥ ६२ ॥

शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः ।
गोहितो गोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षो वृषप्रियः ॥ ६३ ॥

अनिवर्ती निवृत्तात्मा सङ्केप्ता क्षेमकृच्छिवः ।
श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतांवरः ॥ ६४ ॥

श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः ।
श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमाल्लोकत्रयाश्रयः ॥ ६५ ॥

स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिज्योतिर्गणेश्वरः ।
विजितात्माऽविधेयात्मा सत्कीर्तिश्छिन्नसंशयः ॥ ६६ ॥

उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशः शाश्वतस्थिरः ।
भूशयो भूषणो भूतिर्विशोकः शोकनाशनः ॥ ६७ ॥

अर्चिष्मानर्चितः कुम्भो विशुद्धात्मा विशोधनः ।
अनिरुद्धोऽप्रतिरथः प्रद्युम्नोऽमितविक्रमः ॥ ६८ ॥

कालनेमिनिहा वीरः शौरिः शूरजनेश्वरः ।
त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः केशवः केशिहा हरिः ॥ ६९ ॥

कामदेवः कामपालः कामी कान्तः कृतागमः ।
अनिर्देश्यवपुर्विष्णुर्वीरोऽनन्तो धनंजयः ॥ ७० ॥

ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद् ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्धनः ।
ब्रह्मविद् ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः ॥ ७१ ॥

महाक्रमो महाकर्मा महातेजा महोरगः ।
महाक्रतुर्महायज्वा महायज्ञो महाहविः ॥ ७२ ॥

स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रं स्तुतिः स्तोता रणप्रियः ।
पूर्णः पूरयिता पुण्यः पुण्यकीर्तिरनामयः ॥ ७३ ॥

मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेता वसुप्रदः ।
वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हविः ॥ ७४ ॥

सद्गतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भूतिः सत्परायणः ।
शूरसेनो यदुश्रेष्ठः सन्निवासः सुयामुनः ॥ ७५ ॥

भूतावासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोऽनलः ।
दर्पहा दर्पदो दृप्तो दुर्धरोऽथापराजितः ॥ ७६ ॥

विश्वमूर्तिर्महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान् ।
अनेकमूर्तिरव्यक्तः शतमूर्तिः शताननः ॥ ७७ ॥

एको नैकः सवः कः किं यत् तत्पदमनुत्तमम् ।
लोकबन्धुर्लोकनाथो माधवो भक्तवत्सलः ॥ ७८ ॥

सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी ।
वीरहा विषमः शून्यो घृताशीरचलश्चलः ॥ ७९ ॥

अमानी मानदो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोकधृक् ।
सुमेधा मेधजो धन्यः सत्यमेधा धराधरः ॥ ८० ॥

तेजोवृषो द्युतिधरः सर्वशस्त्रभृतां वरः ।
प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रो नैकशृङ्गो गदाग्रजः ॥ ८१ ॥

चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः ।
चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात् ॥ ८२ ॥

समावर्तोऽनिवृत्तात्मा दुर्जयो दुरतिक्रमः ।
दुर्लभो दुर्गमो दुर्गो दुरावासो दुरारिहा ॥ ८३ ॥

शुभाङ्गो लोकसारङ्गः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः ।
इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः ॥ ८४ ॥

उद्भवः सुन्दरः सुन्दो रत्ननाभः सुलोचनः ।
अर्को वाजसनः शृङ्गी जयन्तः सर्वविज्जयी ॥ ८५ ॥

सुवर्णबिन्दुरक्षोभ्यः सर्ववागीश्वरेश्वरः ।
महाहृदो महागर्तो महाभूतो महानिधिः ॥ ८६ ॥

कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पावनोऽनिलः ।
अमृतांशोऽमृतवपुः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ॥ ८७ ॥

सुलभः सुव्रतः सिद्धः शत्रुजिच्छत्रुतापनः ।
न्यग्रोधोऽदुम्बरोऽश्वत्थश्चाणूरान्ध्रनिषूदनः ॥ ८८ ॥

सहस्रार्चिः सप्तजिह्वः सप्तैधाः सप्तवाहनः ।
अमूर्तिरनघोऽचिन्त्यो भयकृद्भयनाशनः ॥ ८९ ॥

अणुर्बृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान् ।
 अधृतः स्वधृतः स्वास्यः प्राग्वंशो वंशवर्धनः ॥ ९० ॥
 भारभृत् कथितो योगी योगीशः सर्वकामदः ।
 आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः ॥ ९१ ॥
 धनुर्धरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः ।
 अपराजितः सर्वसहो नियन्ताऽनियमोऽयमः ॥ ९२ ॥
 सत्त्ववान् सात्त्विकः सत्यः सत्यधर्मपरायणः ।
 अभिप्रायः प्रियार्होऽर्हः प्रियकृत् प्रीतिवर्धनः ॥ ९३ ॥
 विहायसगतिर्ज्योतिः सुरुचिर्हुतभुग्विभुः ।
 रविर्विरोचनः सूर्यः सविता रविलोचनः ॥ ९४ ॥
 अनन्तो हुतभुग्भोक्ता सुखदो नैकजोऽग्रजः ।
 अनिर्विण्णः सदामर्षी लोकाधिष्ठानमद्भुतः ॥ ९५ ॥
 सनात्सनातनतमः कपिलः कपिरव्ययः ।
 स्वस्तिदः स्वस्तिकृत्स्वस्ति स्वस्तिभुक्स्वस्तिदक्षिणः ॥ ९६ ॥
 अरौद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्जितशासनः ।
 शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः ॥ ९७ ॥
 अकूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणांवरः ।
 विद्वत्तमो वीतभयः पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥ ९८ ॥
 उत्तारणो दुष्कृतिहा पुण्यो दुःस्वप्ननाशनः ।
 वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः ॥ ९९ ॥
 अनन्तरूपोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः ।
 चतुरश्रो गभीरात्मा विदिशो व्यादिशो दिशः ॥ १०० ॥
 अनादिर्भूर्भुवो लक्ष्मीः सुवीरो रुचिराङ्गदः ।
 जननो जनजन्मादिर्भूमो भीमपराक्रमः ॥ १०१ ॥
 आधारनिलयोऽधाता पुष्पहासः प्रजागरः ।
 ऊर्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः प्रणवः पणः ॥ १०२ ॥
 प्रमाणं प्राणनिलयः प्राणभृत्प्राणजीवनः ।
 तत्त्वं तत्त्वविदेकात्मा जन्ममृत्युजरातिगः ॥ १०३ ॥
 भूर्भुवःस्वस्तरुस्तारः सविता प्रपितामहः ।
 यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः ॥ १०४ ॥

यज्ञभृद् यज्ञकृद् यज्ञी यज्ञभुक् यज्ञसाधनः ।
यज्ञान्तकृद् यज्ञगुह्यमत्रमत्राद एव च ॥ १०५ ॥

आत्मयोनिः स्वयंजातो वैखानः सामगायनः ।
देवकीनन्दनः स्रष्टा क्षितीशः पापनाशनः ॥ १०६ ॥

शङ्खभृन्नन्दकी चक्री शार्ङ्गधन्वा गदाधरः ।
रथाङ्गपाणिरक्षोभ्यः सर्वप्रहरणायुधः ॥ १०७ ॥

वनमाली गदी शार्ङ्गी शङ्खी चक्री च नन्दकी ।
श्रीमान् नारायणो विष्णुर्वासुदेवोऽभिरक्षतु ॥ १०८ ॥
श्री वासुदेवोऽभिरक्षतु ॐ नम इति ।

सर्वप्रहरणायुध ॐ नम इति ।

उत्तरन्यासः/उत्तरपीठिका

भीष्म उवाच

इतीदं कीर्तनीयस्य केशवस्य महात्मनः ।
नाम्नां सहस्रं दिव्यानामशेषेण प्रकीर्तितम् ॥ १ ॥

य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चापि परिकीर्तयेत् ।
नाशुभं प्राप्नुयात्किञ्चित्सोऽमुत्रेह च मानवः ॥ २ ॥

वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात्क्षत्रियो विजयी भवेत् ।
वैश्यो धनसमृद्धः स्याच्छूद्रः सुखमवाप्नुयात् ॥ ३ ॥

धर्मार्थी प्राप्नुयाद्धर्ममर्थार्थी चार्थमाप्नुयात् ।
कामानवाप्नुयात्कामी प्रजार्थी चाप्नुयात्प्रजाम् ॥ ४ ॥

भक्तिमान् यः सदोत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः ।
सहस्रं वासुदेवस्य नाम्नामेतत्प्रकीर्तयेत् ॥ ५ ॥

यशः प्राप्नोति विपुलं ज्ञातिप्राधान्यमेव च ।
अचलां श्रियमाप्नोति श्रेयः प्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥ ६ ॥

न भयं क्वचिदाप्नोति वीर्यं तेजश्च विन्दति ।
भवत्यरोगो द्युतिमान्बलरूपगुणान्वितः ॥ ७ ॥

रोगार्तो मुच्यते रोगाद्बद्धो मुच्येत बन्धनात् ।
भयान्मुच्येत भीतस्तु मुच्येतापन्न आपदः ॥ ८ ॥

दुर्गाण्यतितरत्याशु पुरुषः पुरुषोत्तमम् ।
स्तुवन्नामसहस्रेण नित्यं भक्तिसमन्वितः ॥ ९ ॥

वासुदेवाश्रयो मर्त्यो वासुदेवपरायणः ।
सर्वपापविशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम् ॥ १० ॥

न वासुदेवभक्तानामशुभं विद्यते क्वचित् ।
जन्ममृत्युजराव्याधिभयं नैवोपजायते ॥ ११ ॥

इमं स्तवमधीयानः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ।
युज्येतात्मसुखक्षान्तिश्रीधृतिस्मृतिकीर्तिभिः ॥ १२ ॥

न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः ।
भवन्ति कृत पुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे ॥ १३ ॥

द्यौः सचन्द्रार्कनक्षत्रा खं दिशो भूर्महोदधिः ।
वासुदेवस्य वीर्येण विधृतानि महात्मनः ॥ १४ ॥

ससुरासुरगन्धर्व सयक्षोरगराक्षसम् ।
जगद्वशे वर्ततेदं कृष्णस्य सचराचरम् ॥ १५ ॥

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सत्त्वं तेजो बलं धृतिः ।
वासुदेवात्मकान्याहुः क्षेत्रं क्षेत्रज्ञ एव च ॥ १६ ॥

सर्वागमानामाचारः प्रथमं परिकल्पते ।
आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः ॥ १७ ॥

ऋषयः पितरो देवा महाभूतानि धातवः ।
जङ्गमाजङ्गमं चेदं जगन्नारायणोद्भवम् ॥ १८ ॥

योगो ज्ञानं तथा सांख्यं विद्याः शिल्पादि कर्म च ।
वेदाः शास्त्राणि विज्ञानमेतत्सर्वं जनार्दनात् ॥ १९ ॥

एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः ।
त्रींल्लोकान्व्याप्य भूतात्मा भुङ्क्ते विश्वभुगव्ययः ॥ २० ॥

इमं स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम् ।
पठेद्य इच्छेत्पुरुषः श्रेयः प्राप्तुं सुखानि च ॥ २१ ॥

विश्वेश्वरमजं देवं जगतः प्रभुमव्ययम् ।
भजन्ति ये पुष्कराक्षं न ते यान्ति पराभवम् ॥ २२ ॥

न ते यान्ति पराभवम् ॐ नम इति ।

अर्जुन उवाच

पद्मपत्रविशालाक्ष पद्मनाभ सुरोत्तम ।
भक्तानामनुरक्तानां त्राता भव जनार्दन ॥ २३ ॥

श्रीभगवानुवाच

यो मां नामसहस्रेण स्तोतुमिच्छति पाण्डव ।
सोऽहमेकेन श्लोकेन स्तुत एव न संशयः ॥ २४ ॥

स्तुत एव न संशय ॐ नम इति ।

व्यास उवाच

वासनाद्वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयम् ।
सर्वभूतनिवासोऽसि वासुदेव नमोऽस्तु ते ॥ २५ ॥
श्री वासुदेव नमोऽस्तुत ॐ नम इति ।

पार्वत्युवाच

केनोपायेन लघुना विष्णोर्नामसहस्रकम् ।
पठ्यते पण्डितैर्नित्यं श्रोतुमिच्छाम्यहं प्रभो ॥ २६ ॥

ईश्वर उवाच
श्रीराम राम रामेति रमे रामे मनोरमे ।
सहस्रनाम तत्तुल्यं राम नाम वरानने ॥ २७ ॥
श्रीरामनाम वरानन ॐ नम इति ।

ब्रह्मोवाच
नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटि युगधारिणे नमः ॥ २८ ॥
सहस्रकोटि युगधारिणे ॐ नम इति ।

सञ्जय उवाच
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥ २९ ॥

श्रीभगवानुवाच
अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥ ३० ॥

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥ ३१ ॥

आर्ताः विषण्णाः शिथिलाश्च भीताः घोरेषु च व्याधिषु वर्तमानाः ।
सङ्कीर्त्य नारायणशब्दमात्रं विमुक्तदुःखाः सुखिनो भवन्ति ॥ ३२ ॥

कायेन वाचा मनसेन्द्रियर्वा बुद्ध्यात्मनावा पकृतेः स्वभावात् ।
करोमि यद्यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयामि ॥ ३३ ॥

इति श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

॥ श्रीभारतीरमणमुख्यप्राणान्तर्गत श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥

५. श्री त्रिविक्रम पण्डिताचार्या का श्री विष्णु स्तुति

येह स्तुति, श्री त्रिविक्रमा पण्डिताचार्या का वायु स्तुति, श्रीमत आचार्या का नरसिंहा नखरा स्तुति और श्री नारायणा पण्डिताचार्या का नरसिंहा और शिव स्तुतियों को पञ्च स्तुतियों कहा जाते है । सारे माध्वों इन स्तुतियों का उच्चारण हर दिन करना चाहिए ।

॥ श्रीविष्णुस्तुतिः ॥

श्रीमध्वसंसेवितपादपद्मं रुद्रादिदेवैः परिसेव्यमानम् ।

ऋष्यादिभिर्वेदपथैः सुगेयं कथं नु पश्येयममोघवीर्यम् ॥ १ ॥

हृन्मन्दिरे सुन्दररत्नपीठे लक्ष्म्यात्मके सारतरे निविष्टम् ।

श्रीभूसमाश्लिष्टतनुं तथाऽपि पूर्णं निजानन्दमयं परेशम् ॥ २ ॥

अनन्तपूर्णेन्दुकिरीटशोभितं सुनीलस्निग्धालकशोभिसन्मुखम् ।

प्रत्यग्रकञ्जायतलोललोचनं सुचम्पकाकोरकनासिकायुतम् ॥ ३ ॥

प्रवालमध्यार्पितकुन्दकोरकं स्फुरत्कपोलद्युतिदीप्तकुण्डलम् ।

केयूरभूषायुतबाहुदण्डकं सुचक्रशङ्खाब्जगदाविराजितम् ॥ ४ ॥

प्रैवेयरत्नाभरणादिभूषितं सत्कौस्तुभावेष्टितकम्बुकन्धरम् ।

सुवर्णसूत्राञ्चितसुन्दरोरसं विचित्रपिताम्बरधारिणं प्रभुम् ॥ ५ ॥

करिराजकरोपमोरुयुग्मं प्रियया सेवितजङ्घया समेतम् ।

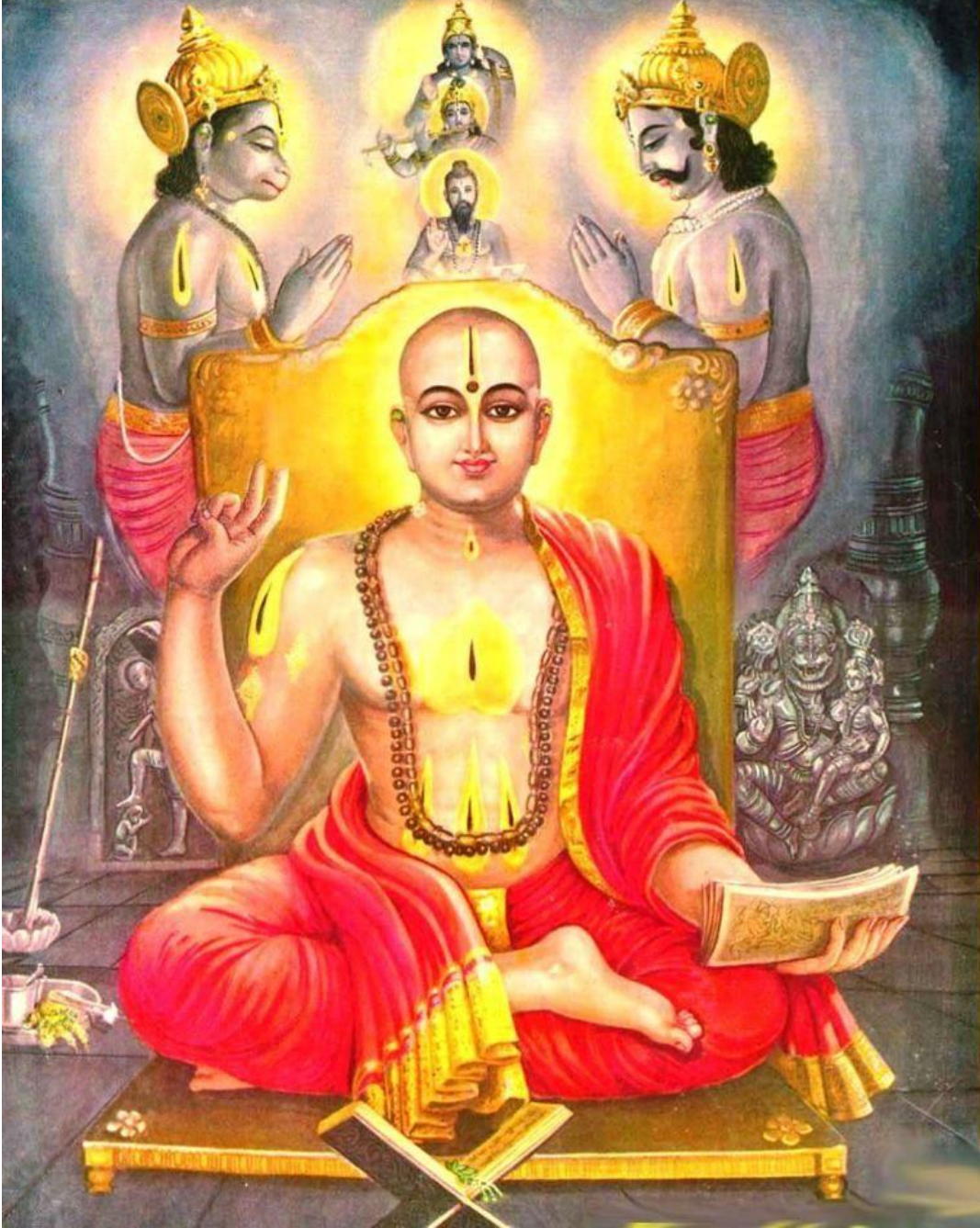
वरकूर्मप्रपदेन शोभमानं ह्यनभिव्यक्तसुगुल्फपादयुग्मम् ॥ ६ ॥

नखराजिसुपूर्णचन्द्रकान्त्या नुतिमज्जनतापहारिणं रमेशम् ।

निजपूर्णसुबोधविग्रहं परमानन्दपरात्मदैवतम् ॥ ७ ॥

इति श्रीत्रिविक्रमपण्डिताचार्यविरचिता श्रीविष्णुस्तुतिः समाप्ता ॥

६. श्री हरि वायु स्तुति



हरि वायु स्तुति श्री विष्णु और प्राण देव के तीन अवतारों, अर्थात् श्री हनुमान, भीमसेन और मध्वाचार्या की प्रार्थना है । इसकी रचना श्री त्रिविक्रम पंडिताचार्य ने की थी, जो श्रीपाद मध्वाचार्य के सबसे प्रमुख शिष्यों में से एक और पूर्व स्मार्त विद्वान थे । जब उन्होंने एक बार उडुपी मंदिर के आंतरिक गर्भगृह में देखा, जहां मध्वाचार्य श्री विष्णु की पूजा कर रहे थे, तो उन्होंने उन्हें तीन रूपों में देखा – हनुमान श्री राम की पूजा कर रहे थे, भीम श्री कृष्ण की पूजा कर रहे थे और श्रीमत आचार्य व्यास देव की पूजा कर रहे थे । उस दृश्य को देखकर, उन्होंने मुख्य प्राण देव और उनके तीन अवतारों की प्रशंसा करते हुए वायु स्तुति का उच्चारण किया । हालाँकि, श्रीपाद मध्वाचार्य ने कहा कि सभी कार्यों के माध्यम से श्री विष्णु

का ध्यान करना आवश्यक है । यही कारण है कि उन्होंने वायु स्तुति से पहले और बाद में उच्चारण करने के लिए, नरसिंहा नख स्तुति की रचना की । इसलिए इसे भी यहां शामिल किया गया है ।

॥ श्रीहरिवायुस्तुतिः ॥

॥ अथ श्री नखस्तुतिः ॥

पान्त्वस्मान् पुरुहूतवैरि बलवन्मातङ्ग माद्यद्घटा कुम्भोच्चाद्रि विपाटनाधिकपटु प्रत्येक वज्रायिताः ।
श्रीमत्कण्ठीरवास्य प्रतत सुनखरा दारितारातिदूर प्रध्वस्तध्वान्त शान्त प्रवितत मनसा भाविता भूरिभागैः ॥
१ ॥

लक्ष्मीकान्त समन्ततोऽपिकलयन् नैवेशितुस्ते समं पश्याम्युत्तम वस्तु दूरतरतोऽपास्तं रसो योऽष्टमः ।
यद्रोषोत्कर दक्ष नेत्र कुटिल प्रान्तोत्थिताग्नि स्फुरत् खद्योतोपम विस्फुलिङ्गभसिता ब्रह्मेशशक्रोत्कराः ॥ २
॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्यकृता श्रीनृसिंहनखरस्तुतिः समाप्ता ॥

॥ अथ श्रीहरिवायुस्तुतिः ॥

श्रीमद्विष्णवङ्घ्रि निष्ठा अतिगुणगुरुतम श्रीमदानन्दतीर्थ त्रैलोक्याचार्य पादोज्ज्वल जलजलसत्
पांसवोऽस्मान्पुनन्तु ।
वाचांयत्रप्रणेत्रीत्रिभुवनमहिता शारदा शारदेन्दुः ज्योत्स्नाभद्रस्मित श्रीधवळितककुभाप्रेमभारम्बभार ॥ १ ॥

उत्कण्ठाकुण्ठकोलाहलजवविदिताजस्रसेवानुवृद्ध प्राज्ञात्मज्ञान धूतान्धतमससुमनो मौलिरत्नावळीनाम् ।
भक्त्युद्रेकावगाढ प्रघटनसघटात्कार सङ्घृष्यमाण प्रान्तप्राग्याङ्घ्रि पीठोत्थित कनकरजः
पिञ्जरारञ्जिताशाः ॥ २ ॥

जन्माधिव्याधुपाधिप्रतिहतिविरहप्रापकाणां गुणानाम् अग्न्याणां अर्पकाणां चिरमुदितचिदानन्द
सन्दोहदानाम् ।
एतेषामेशदोष प्रमुषितमनसां द्वेषिणां दूषकाणाम् दैत्यानामार्थिमन्थे तमसि विदधतां संस्तवेनास्मि शक्तः
॥ ३ ॥

अस्याविष्कर्तुकामं कलिमलकलुषेऽस्मिन्जनेज्ञानमार्गम् वन्द्यं चन्द्रेन्द्ररुद्र द्युमणिफणिवयोः
नायकद्यैरिहाद्य ।
मध्वाख्यं मन्त्रसिद्धं किमुतकृतवतो मारुतस्यावतारम् पातारं पारमेष्ठ्यं पदमपविपदः प्राप्तुरापन्न पुंसाम्
॥ ४ ॥

उद्यद्विद्युत्प्रचण्डां निजरुचि निकरव्याप्त लोकावकाशो बिभ्रद्दीमो भुजेयोऽभ्युदित दिनकराभाङ्गदाढ्य
प्रकाण्डे ।
वीर्योद्धार्या गदाग्र्यामयमिह सुमतिंवायुदेवोविदध्यात् अध्यात्मज्ञाननेता यतिवरमहितो भूमिभूषामर्णिमे ॥ ५
॥

संसारोत्तापनित्योपशमद सदय स्नेहहासाम्बुपूर प्रोद्यद्विद्यावनद्य द्युतिमणिकिरण श्रेणिसम्पूरिताशः ।
श्रीवत्साङ्गाधि वासोचित तरसरलश्रीमदानन्दतीर्थ क्षीराम्भोधिर्विभिन्द्याद्भवदनभिमतम्भूरिमेभूति हेतुः ॥ ६
॥

मूर्धन्येषोऽन्जलिर्मे दृढतरमिहते बध्यते बन्धपाश क्षेत्रेधात्रे सुखानां भजति भुवि भविष्यद्विधात्रे द्युभर्त्रे ।
अत्यन्तं सन्ततं त्वं प्रदिश पदयुगे हन्त सन्ताप भाजाम् अस्माकं भक्तिमेकां भगवत उतते माधवस्याथ
वायोः ॥ ७ ॥

साभ्रोष्णाभीशु शुभ्रप्रभमभयनभो भूरिभूभृद्विभूतिः भ्राजिष्णुभूरूभूणां भवनमपि विभोऽभेदिबभ्रेबभूवे ।
येनभ्रोविभ्रमस्ते भ्रमयतुसुभृशं बभ्रुवद्दुर्भृताशान् भ्रान्तिर्भेदाव भासस्त्वितिभयमभि भोर्भूक्ष्यतोमायिभिक्षून्
॥ ८ ॥

येऽमुम्भावम्भजन्ते सुरमुखसुजनाराधितं ते तृतीयम् भासन्ते भासुरैस्ते सहचरचलितैश्चामरैश्चारुवेशाः ।
वैकुण्ठे कण्ठलग्न स्थिरशुचि विलसत्कान्ति तारुण्यलीला लावण्या पूर्णकान्ता
कुचभरसुलभाश्लेषसम्मोदसान्द्राः ॥ ९ ॥

आनन्दान्मन्दमन्दा ददति हि मरुतः कुन्दमन्दारनन्द्यावर्ताऽमोदान् दधानां मृदुपद मुदितोद्गीतकैः
सुन्दरीणाम् ।
वृन्दैरावन्द्य मुक्तेन्द्रहिमगु मदनाहीन्द्र देवेन्द्रसेव्येमौकुन्दे मन्दरेऽस्मिन्नविरतमुदयन्मोदिनां देव देव ॥ १०
॥

उत्तप्तात्युत्कटत्विट् प्रकटकटकट ध्वानसङ्घट्टनोद्यद्विद्युद्व्यूढस्फुलिङ्गः प्रकर विकिरणोत्काथिते
बाधिताङ्गान् ।
उद्गाढम्पात्यमाना तमसि तत इतः किङ्करैः पङ्क्तिलेतेपङ्क्तिर्ग्राव्यां गरिम्णां ग्लपयति हि भवद्वेषिणो
विद्वदाद्य ॥ ११ ॥

अस्मिन्नस्मद्गुरूणां हरिचरण चिरध्यान सन्मङ्गलानाम्युष्माकं पार्श्वभूमिं धृतरणरणिकः स्वर्गिसेव्यांप्रपन्नः
।
यस्तूदास्ते स आस्तेऽधिभवमसुलभ क्लेश निर्मूकमस्तप्रायानन्दं कथं चित्रवसति सततं पञ्चकष्टेऽतिकष्टे ॥
१२ ॥

क्षुत् क्षामान् रूक्षरक्षो रदखरनखर क्षुण्णविक्षोभिताक्षान्आमग्नानान्धकूपे क्षुरमुखमुखरैः
पक्षिभिर्विक्षताङ्गान् ।
पूयासृन्मूत्र विष्ठा क्रिमिकुलकलिलेतत्क्षणक्षिप्त शक्त्याद्यस्त्रवातादितान् स्त्वद्विष उपजिहते वज्रकल्पा
जलूकाः ॥ १३ ॥

मातर्मेमातरिश्वन् पितरतुलगुरो भ्रातरिष्ठाप्तबन्धोस्वामिन्सर्वान्तरात्मन्नजरजरयितः जन्ममृत्यामयानाम् ।
गोविन्दे देहिभक्तिं भवतिच भगवन्नूर्जितां निर्निमित्ताग्निर्व्याजां निश्चलां सद्गुणगण बृहतीं शाश्वतीमाशुदेव
॥ १४ ॥

विष्णोरत्युत्तमत्वादखिलगुणगणैस्तत्र भक्तिङ्गरिष्ठाम् संश्लिष्टे श्रीधराभ्याममुमथ परिवारात्मना सेवकेषु ।
यः सन्धत्ते विरिञ्चि श्वसन विहगपानन्त रुद्रेन्द्र पूर्वेष्वाध्यायंस्तारतम्यं स्फुटमवति सदा वायुरस्मद्गुरुस्तम्
॥ १५ ॥

तत्त्वज्ञान् मुक्तिभाजः सुखयिसि हि गुरो योग्यतातारतम्यात् आधत्से मिश्रबुद्धिं
स्त्रिदिवनिरयभूगोचरान्नित्यबद्धान् ।
तामिस्रान्धादिकाख्ये तमसिसुबहुलं दुःखयस्यन्यथाज्ञान् विष्णोराज्ञाभिरित्थं शृति शतमितिहासादि
चाकर्णयामः ॥ १६ ॥

वन्देऽहं तं हनूमानिति महितमहापौरुषो बाहुशालिख्यातस्तेऽम्योऽवतारः सहित इह बहुब्रह्मचर्यादि धर्मैः ।
सस्नेहानां सहस्वानहरहरहितं निर्दहन् देहभाजाम्अंहोमोहापहो यः स्पृहयति महतीं भक्तिमद्यापि रामे ॥
१७ ॥

प्राक्पञ्चाशत्सहस्रैर्व्यवहितमहितं योजनैः पर्वतं त्वम्यावत्सञ्जीवनाद्यौषध निधिमधिकप्राणलङ्कामनैषिः ।
अद्राक्षीदुत्पतन्तं तत उत गिरिमुत्पाटयन्तं गृहीत्वायान्तं खे राघवाङ्घ्रौ प्रणतमपि तदैकक्षणे त्वांहिलोकः
॥ १८ ॥

क्षिप्तः पश्चात्सत्सलीलं शतमतुलमते योजनानां सउच्चस्तावद्विस्तार वंशच्यापि उपललवैव व्यग्रबुद्ध्या
त्वयातः ।
स्वस्वस्थानस्थिताति स्थिरशकल शिलाजाल संश्लेष नष्टछेदाङ्कः प्रागिवाभूत् कपिवरवपुषस्ते नमः
कौशलाय ॥ १९ ॥

दृष्ट्वा दृष्टाधिपोरः स्फुटितकनक सद्धर्म घृष्टास्थिकूटम् निष्पिष्टं हाटकाद्रि प्रकट तट तटाकाति शङ्को
जनोऽभूत् ।
येनाजौ रावणारिप्रियनटनपटुर्मुष्टिरिष्टं प्रदेष्टुम् किनेष्टे मे स तेऽष्टापदकट कतटिकोटि भामृष्ट काष्ठः ॥
२० ॥

देव्यादेश प्रणीति दृहिण हरवरावद्य रक्षो विघाताऽद्यासेवोद्यद्यार्द्रः सहभुजमकरोद्रामनामा मुकुन्दः ।
दुष्प्रापे पारमेष्ठ्ये करतलमतुलं मूर्धिविन्यस्य धन्यम् तन्वन्भूयः प्रभूत प्रणय विकसिताब्जेक्षणस्त्वेक्षमाणः
॥ २१ ॥

जघ्नेनिघ्नेनविघ्नो बहुलबलबकध्वंस नाद्येनशोचत् विप्रानुक्रोश पाशैरसु विधृति सुखस्यैकचक्राजनानाम् ।
तस्मैतेदेव कुर्मः कुरुकुलपतये कर्मणाचप्रणामान् किर्मीरं दुर्मतीनां प्रथमं अथ च यो नर्मणा निर्ममाथ ॥
२२ ॥

निर्मृद्नन्नत्य यत्नं विजरवर जरासन्ध कायास्थिसन्धीन् युद्धे त्वं स्वध्वरे वापशुमिवदमयन् विष्णु पक्षद्विडीशम्
।
यावत्प्रत्यक्ष भूतं निखिलमखभुजं तर्पयामासिथासौ तावत्यायोजि तृप्याकिमुवद भघवन् राजसूयाश्वमेधे ॥
२३ ॥

क्ष्वेलाक्षीणाट्टहासहं तवरणमरिहन्नुद्गदोद्दामबाहोः बह्वक्षौहिण्य नीकक्षपण सुनिपुणं यस्य सर्वोत्तमस्य ।
शुभ्रशार्थं चकर्त्त स्वयमयमथ संवक्तुमानन्दतीर्थ श्रीमन्नामन्समर्थस्त्वमपि हि युवयोः पादपद्मं प्रपद्ये ॥ २४
॥

दृह्यन्तींहृदहं मां दृतमनिल बलाद्रावयन्तीमविद्या निद्रांविद्राव्य सद्यो रचनपटुमथापाद्यविद्यासमुद्र ।
वाग्देवी सा सुविद्या द्रविणद विदिता द्रौपदी रुद्रपत्यात् उद्रिक्ताद्रागभद्रा द्रहयतु दयिता पूर्वभीमाज्ञयाते
॥ २५ ॥

याभ्यां शुश्रूषुरासीः कुरुकुल जनने क्षत्रविप्रोदिताभ्याम् ब्रह्मभ्यां बृंहिताभ्यां चितसुख वपुषा
कृष्णनामास्पदाभ्याम् ।
निर्भेदाभ्यां विशेषाद्विवचन विशयाभ्यामुभाभ्याममूभ्याम् तुभ्यं च क्षेमदेभ्यः सरिसिजविलसल्लोचनेभ्यो
नमोऽस्तु ॥ २६ ॥

गच्छन् सौगन्धिकार्थं पथि स हनुमतः पुच्छमच्छस्य भीमः प्रोद्धर्तुं नाशकत्स त्वमुमुरुवपुषा भीषयामास
चेति ।
पूर्णज्ञानौजसोस्ते गुरुतमवपुषोः श्रीमदानन्दतीर्थं क्रीडामात्रं तदेतत् प्रमदद सुधियां मोहक द्वेषभाजाम् ॥
२७ ॥

बह्वीः कोटीरटीकः कुटलकटुमतीनुत्कटाटोप कोपान् द्राक्चत्वं सत्वरत्वाच्चरणद गदया
पोथयामासिथारीन् ।
उन्मथ्या तत्थ्य मिथ्यात्व वचन वचनान् उत्पथस्थांस्तथाऽयान् प्रायच्छः स्वप्रियायै प्रियतम कुसुमं प्राण
तस्मै नमस्ते ॥ २८ ॥

देहादुत्क्रामितानामधिपति रसतामक्रमाद्वक्रबुद्धिः क्रुद्धः क्रोधैकवश्यः क्रिमिरिव मणिमान् दुष्कृती
निष्क्रियार्थम् ।
चक्रे भूचक्रमेत्य क्रकचमिव सतां चेतसः कष्टशास्त्रं दुस्तरकं चक्रपाणेर्गुणगण विरहं जीवतां चाधिकृत्य ॥
२९ ॥

तद्दुत्प्रेक्षानुसारात्कतिपय कुनरैरादृतोऽन्यैर्विसृष्टो ब्रह्माहं निर्गुणोऽहं वितथमिदमिति ह्येषपाशण्डवादः ।
तद्युक्त्याभास जाल प्रसर विषतरूद्वाहदक्षप्रमाण ज्वालामालाधरोऽग्निः पवन विजयते तेऽवतारस्तृतीयः
॥ ३० ॥

आक्रोशन्तो निराशा भयभर विवशस्वाशयाच्छिन्नदर्पा वाशन्तो देशनाशस्विति बत कुधियां
नाशमाशादशाऽशु ।
धावन्तोऽश्लीलशीला वितथ शपथ शापा शिवाः शान्त शौर्याः त्वद्व्याख्या सिंहनादे सपदि ददृशिरे मायि
गोमायवस्ते ॥ ३१ ॥

त्रिष्वप्येवावतारेष्वरिभिरपघृणं हिंसितोनिर्विकारः सर्वज्ञः सर्वशक्तिः सकलगुणगणापूर्ण रूपप्रगल्भः ।
स्वच्छः स्वच्छन्द मृत्युः सुखयसि सुजनं देवकिं चित्रमत्र त्राता यस्य त्रिधामा जगदुतवशगं किङ्कराः
शङ्कराद्याः ॥ ३२ ॥

उद्यन्मन्दस्मित श्रीर्मृदु मधुमधुरालाप पीयूषधारा पूरासेकोपशान्ता सुखसुजन मनोलोचना पीयमानं ।
सन्द्रक्ष्येसुन्दरं सन्दुहदिह महदानन्दं आनन्दतीर्थं श्रीमद्वक्तेन्दु बिम्बं दुरतनुदुदितं नित्यदाहं कदानु ॥ ३३
॥

प्राचीनाचीर्ण पुण्योच्चय चतुरतराचारतश्चारुचितान् अत्युच्चां रोचयन्तीं श्रुतिचित वचनांश्राव कांश्चोद्यचुञ्चून् ।

व्याख्यामुखात दुःखां चिरमुचित महाचार्य चिन्तारतांस्ते चित्रां सच्छास्त्रकर्ताश्चरण परिचरां
छावयास्मांश्चकिञ्चित् ॥ ३४ ॥

पीठेरलोकपक्लृप्ते रुचिररुचिमणि ज्योतिषा सन्निषण्णम् ब्रह्माणं भाविनं त्वां ज्वलति निजपदे वैदिकाद्या
हि विद्याः ।

सेवन्ते मूर्तिमत्यः सुचरितचरितं भाति गन्धर्व गीतंप्रत्येकं देवसंसत्स्वपि तव भगवन्नर्तितद्दयोवधूषु ॥ ३५ ॥

सानुक्रोषैरजस्रं जनिमृति निरयाद्यूर्मिमालाविलेऽस्मिन् संसाराब्धौनिमग्रांशरणमशरणानिच्छतो
वीक्ष्यजन्तून् ।

युष्माभिः प्रराथितः सन् जलनिधिशयनः सत्यवत्यां महर्षेः व्यक्तश्चिन्मात्र मूर्तिनखलु भगवतः प्राकृतो जातु
देहः ॥ ३६ ॥

अस्तव्यस्तं समस्तश्रुति गतमधमैः रत्नपूगं यथान्यैः अर्थ लोकोपकृत्यैः गुणगणनिलयः सूत्रयामास कृत्स्नम् ।
योऽसौ व्यासाभिधानस्तमहमहरहः भक्तितस्त्वत्प्रसादात् सद्यो विद्योपलब्धै गुरुतममगुरुं देवदेवं नमामि
॥ ३७ ॥

आज्ञामन्यैरधार्या शिरसि परिसरद्रश्मि कोटीरकोटौ कृष्णस्याक्लिष्ट कर्मादधदनु सराणादर्थितो देवसङ्घैः ।
भूमावागत्य भूमन्नसुकरमकरोर्ब्रह्मसूत्रस्य भाष्यम् दुर्भाष्यं व्यास्यदस्योर्मणिमत उदितं
वेदसद्युक्तिभिस्त्वम् ॥ ३८ ॥

भूत्वाक्षेत्रे विशुद्धे द्विजगणनिलये रौप्यपीठाभिधाने तत्रापि ब्रह्मजातिस्त्रिभुवन विशदे मध्यगेहाख्य गेहे ।
पारिव्राज्याधि राजः पुनरपि बदरीं प्राप्य कृष्णं च नत्वा कृत्वा भाष्याणि सम्यक् व्यतनुत च भवान्
भरतार्थप्रकाशम् ॥ ३९ ॥

वन्दे तं त्वां सुपूर्ण प्रमतिमनुदिना सेवितं देववृन्दैः वन्दे वन्दारुमीशे श्रिय उत नियतं श्रीमदानन्दतीर्थम् ।
वन्दे मन्दाकिनी सत्सरिदमल जलासेक साधिक्य सङ्गम् वन्देऽहं देव भक्त्या भव भय दहनं
सज्जनान्मोदयन्तम् ॥ ४० ॥

सुब्रह्मण्याख्य सूरैः सुत इति सुभृशं केशवानन्दतीर्थश्रीमत्पादाब्ज भक्तः स्तुतिमकृत हरेर्वायुदेवस्य चास्य
।
त्वत्पादार्चादरेण ग्रथित पदल सन्मालया त्वेतयायेसंराध्यामूनमन्ति प्रततमतिगुणा मुक्तिमेते व्रजन्ति ॥ ४१
॥

इति श्रीत्रिविक्रमपण्डिताचार्य विरचितं श्रीहरिवायुस्तुतिः सम्पूर्णम् ॥

॥ अथ श्री नखस्तुतिः ॥

पान्त्वस्मान् पुरुहूतवैरि बलवन्मातङ्ग माद्यद्घटा कुम्भोच्चाद्रि विपाटनाधिकपटु प्रत्येक वज्रायिताः ।
श्रीमत्कण्ठीरवास्य प्रतत सुनखरा दारितारातिदूर प्रध्वस्तध्वान्त शान्त प्रवितत मनसा भाविता भूरिभागैः ॥
१ ॥

लक्ष्मीकान्त समन्ततोऽपिकलयन् नैवेशितुस्ते समं पश्याम्युत्तम वस्तु दूरतरतोऽपास्तं रसो योऽष्टमः ।
यद्रोषोत्कर दक्ष नेत्र कुटिल प्रान्तोत्थिताग्नि स्फुरत् खद्योतोपम विस्फुलिङ्गभसिता ब्रह्मेशशक्रोत्कराः ॥ २
॥

इति श्रीमदानन्दतीर्थभगवत्पादाचार्यकृता श्रीनृसिंहनखरस्तुतिः समाप्ता ॥

॥ श्रीभारतीरमणमुख्यप्राणान्तर्गत श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥

७. श्री नारायण पण्डिताचार्या का श्री नरसिंह स्तुति

॥ श्रीनरसिंहस्तुतिः ॥

उदयरविसहस्रद्योतितं रूक्षवीक्षं प्रळयजलधिनादं कल्पकृद्वह्निवक्तम् ।
सुरपतिरिपुवक्षःक्षोदरक्तोक्षिताङ्गं प्रणतभयहरं तं नारसिंहं नमामि ॥ १ ॥

प्रळयरविकरालाकाररुक्चक्रवालं विरलयदुरुरोचीरोचिताशान्तराल ।
प्रतिभयतमकोपाल्युक्तोच्चाट्टहासिन् दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ २ ॥

सरसरभसपादापातभाराभिराव प्रचकितचलसप्तद्वन्द्वलोकस्तुतस्त्वम् ।
रिपुरुधिरनिषेकेणैव खोणङ्किशालिन् दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ३ ॥

तव घनघनघोषो घोरमापघ्राय जङ्घापरिघमलघुमूरुव्याजतेजोगिरिं च ।
घनविघटितमागादैत्यजङ्घालसङ्घो दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ४ ॥

कटकिकटकराजद्वाटकाग्रस्थलाभाप्रकटपटतटित्ते सत्कटिस्थातिपट्टी ।
कटुककटुकदुष्टाटोपट्टिप्रमुष्टौ दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ५ ॥

प्रखरनखरवज्रोत्खातरूक्षादिवक्षः शिखरिशिखररक्तैराक्तसन्दोहदेह ।
सुवलिभशुभकुक्षे भद्रगंभीरनाभे दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ६ ॥

स्फुरयति तव साक्षात्सैव नक्षत्रमाला क्षपितदितिजवक्षोव्याप्तनक्षत्रमार्गम् ।
अरिदरधर जान्वासक्तहस्तद्वयाहो दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ७ ॥

कटुविकटसटौघोद्धट्टनोद्भ्रष्टभूयो घनपटलविशालाकाशलब्धावकाशम् ।
करपरिघविमर्दप्रोद्यमं ध्यायतस्ते दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ८ ॥

हठलुठदलधिष्ठोत्कण्ठ दष्टोष्ठ विद्युत्सट शठकठिनोरःपीठभित्सुष्ठुनिष्ठाम् ।
पठति नु तव कण्ठाधिष्ठघोरान्त्रमाला दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ९ ॥

हत बहुमिहिराभासह्यसंहाररंहो हुतवहबहुहेतिहेषितानन्तहेति ।
अहितविहितमोहं संवहन् सैहमास्यं दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १० ॥

गुरुगुरुगिरिराजत्कन्दरान्तर्गते वा दिनमणिमणिश्रृङ्गे वान्तवह्निप्रदीप्ते ।
दधदतिकदुदंष्ट्रे भीषणोञ्जिह्ववक्त्रे दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ११ ॥

अधरितविबुधाब्धिध्यानधैर्यं विदध्यद्विविधविबुधधीश्रद्धापितेन्द्रारिनाशम् ।
विदधदतिकटाहोद्धट्टहासं दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १२ ॥

त्रिभुवनतृणमात्रत्राणतृष्णार्द्रनेत्रत्रयमतिलधितार्चिर्विष्टपादम् ।
नवतररविताम्रं धारयन् रूक्षवीक्षं दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १३ ॥

भ्रमदभिभवभूभृद्भूरिभूभारसद्भिद्धिदनवविभवभूविभ्रमादभ्रशुभ्र ।
ऋभुभवभयभेत्तर्भासि भोभोविभोभी दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १४ ॥

© Copyrights 2022-26 Achyuta Bhakti Deets

श्रवणकचितचञ्चत्कुण्डलोच्चण्डगण्ड भ्रुकुटिकटुललाटश्रेष्ठनासारुणोष्ठ ।
 वरद सुरद राजत्केसरोत्सारितारे दह दह नरसिंहासहवीर्याहितं मे ॥ १५ ॥
 कविकचकचराजद्रत्नकोटीरशालिन् गलगतगलदुस्रोदाररत्नाङ्गदाढ्य ।
 कनककटककाञ्चीशिञ्जिनीमुद्रिकावन् दह दह नरसिंहासहवीर्याहितं मे ॥ १६ ॥
 अरिदरमसिखेटौ बाणचापे गदां सन्मुसलमपि दधानः पाशवर्याङ्कुशौ च ।
 करयुगलधृतान्तस्रग्विभिन्नारिवक्षो दह दह नरसिंहासहवीर्याहितं मे ॥ १७ ॥
 चट चट चट दूरं मोहय भ्रामयारीन् कडि कडि कडि कायं ज्वालरय स्फोटयस्व ।
 जहि जहि जहि वेगं शात्रवं सानुबन्धं दह दह नरसिंहासहवीर्याहितं मे ॥ १८ ॥
 विधिभव विबुधेशभ्रामकाग्निस्फुलिङ्गप्रसविविकटदंष्ट्रोज्जिह्ववक्त्रिनेत्र ।
 कलकलकल कामं पाहि मां ते सुभक्तं दह दह नरसिंहासहवीर्याहितं मे ॥ १९ ॥
 कुरु कुरु करुणां तां साङ्कुरां दैत्यपोते दिश दिश विशदां मे शाश्वतीं देवदृष्टिम् ।
 जय जय जयमूर्तेऽनार्त जेतव्यपक्षं दह दह नरसिंहासहवीर्याहितं मे ॥ २० ॥
 स्तुतिरियमहितघ्नी सेविता नारसिंही तनुरिव परिशान्ता मालिनी साभितोलम् ।
 तदखिलगुरुमाग्याश्रीदरूपा महद्भिस्सुनियमनयकृत्यैस्सद्गुणैर्नित्ययुक्ता ॥ २१ ॥
 लिकुचतिलकसूनुस्सद्धितार्थानुसारी नरहरिनुतिमेतां शत्रुसंहारहेतुम् ।
 अकृत सकलपापध्वंसिनीं यः पठेत्तां ब्रजति नृहरिलोकं कामलोभाद्यसक्तः ॥ २२ ॥
 इति श्रीमन्नारायणपण्डिताचार्य विरचिता श्रीनरसिंहस्तुतिः समाप्ता ॥

८. श्री महालक्ष्मी स्तुति

(विष्णु पुराण, अंश १, अध्याय ९, श्लोकों ११६-१३१)

येह महालक्ष्मी देवि केलिये इन्द्र देव से रचित हुअ एक स्तुति है ।



नमस्ते सर्वभूतानां जननीमब्जसम्भवाम् ।
श्रियमुन्निद्रपद्माक्षी विष्णोर्वक्षः स्थलस्थिताम् ॥ ११६ ॥

त्वं सिद्धिस्त्वं सुधा स्वाहा स्वधा त्वं लोकपावनि ।
सन्ध्या रात्रिः प्रभा भूतिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती ॥ ११७ ॥

यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभने ।
 आत्मविद्या च देवि त्वं विमुक्तिफलदायिनी ॥ ११८ ॥
 आन्वीक्षिकी त्रयी वार्त्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च ।
 सौम्यासौम्यैर्जगद्रूपैस्त्वयैतद्देवि पूरितम् ॥ ११९ ॥
 का त्वन्या त्वामृते देवि सर्वयज्ञमयं वपुः ।
 अध्यास्ते देवदेवस्य योगिचिन्त्यं गदाभृतः ॥ १२० ॥
 त्वया देवि परित्यक्तं सकलं भुवनत्रयम् ।
 विनष्टप्रायमभवत् त्वयेदानीं समेधितम् ॥ १२१ ॥
 दाराः पुत्रास्तथागारं सुहृद्भान्यधनादिकम् ।
 भवत्येतन्महाभागे नित्यं त्वद्वीक्षणानृणाम् ॥ १२२ ॥
 शरीरारोग्यमैश्वर्यमरिपक्षक्षयः सुखम् ।
 देवि त्वदूदृष्टिदृष्टानां पुरुषाणां न दुर्लभम् ॥ १२३ ॥
 त्वं माता सर्वभूतानां देवदवो हरिः पिता ।
 त्वयैतद्विष्णुना चाद्य जगद् व्याप्तं चराचरम् ॥ १२४ ॥
 मा नः कोशं तथा गोष्ठं मा गृहं मा परिच्छदम् ।
 मा शरीरं कलत्रञ्च त्यजेथाः सर्वपावनि ॥ १२५ ॥
 मा पुत्रान् मा सुहृद्वर्गं मा पशून् मा विभूषणम् ।
 त्यजेथा मम देवस्य विष्णोर्वक्षःस्थलालये ॥ १२६ ॥
 सत्त्वेन सत्यशौचाभ्यां तथा शीलादिभिर्गुणैः ।
 त्यज्यन्ते ते नराः सद्यः सन्त्यक्ता ये त्वयामले ॥ १२७ ॥
 त्वयावलोकिताः सद्यः शीलाद्यैरखिलैर्गुणैः ।
 कुलैश्वर्यैश्च मुह्यन्ते पुरुषा निर्गुणा अपि ॥ १२८ ॥
 स श्लाघ्यः स गुणी धन्यः स कुलीनः स बुद्धिमान् ।
 स शूरः स च विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षितः ॥ १२९ ॥
 सद्यो वैगुण्यमायान्ति शीलाद्याः सकला गुणाः ।
 पराङ्मुखी जगद्भ्रात्रि यस्य त्वं विष्णुवल्लभे ॥ १३० ॥
 न ते वर्णयितुं शक्ता गुणान् जिह्वापि वेधसः ।
 प्रसीद देवि पद्माक्षि मास्मांस्त्याक्षीः कदाचन ॥ १३१ ॥



९. श्री शिव स्तुति

॥ श्रीशिवस्तुतिः ॥

स्फुटं स्फटिकसप्रभं स्फटितहारकश्रीजटं शशाङ्कदलशेखरं कपिलफुल्लनेत्रत्रयम् ।
तरक्षुवरकृत्तिमद्भुजगभूषणं भूतिमत्कदा नु शितिकण्ठ ते वपुरवेक्षते वीक्षणम् ॥ १ ॥

त्रिलोचन विलोचने लसति ते ललामायिते स्मरो नियमघस्मरो नियमिनामभूद्रस्मसात् ।
स्वभक्तिलतया वशीकृतवतीसतीयं सती स्वभक्तवशतो भवानपि वशी प्रसीद प्रभो ॥ २ ॥

महेश महितोऽसि तत्पुरुष पूरुषाग्र्यो भवानघोररिपुघोर तेऽनवम वामदेवाञ्जलिः ।
नमः सपदि जात ते त्वमिति पञ्चरूपोचितप्रपञ्चचयपञ्चवृन्मम मनस्तमस्ताडय ॥ ३ ॥

रसाघनरसानलानिलवियद्विस्वद्विधुप्रयष्टृषु निविष्टमित्यज भजामि मूर्त्यष्टकम् ।
प्रशान्तमुत भीषणं भुवनमोहनं चेत्यहो वपूंषि गुणपूषितेऽहमहमात्मनोऽहंभिदे ॥ ४ ॥

विमुक्तिपरमाध्वनां तव पडध्वनामास्पदं पदं निगमवेदिनो जगति वामदेवादयः ।
कथञ्चिदुपशिक्षिता भगवतैव संविद्रते वयं तु विरलान्तराः कथमुमेश तन्मन्महे ॥ ५ ॥

कठोरितकुठारया ललितशूलया बाहया रयाडुमरया स्फुरद्धरिणया सखद्वाङ्गया ।
चलाभिरचलाभिरप्यगणिताभिरुन्नृत्यतश्चतुर्दश जगन्ति ते जयजयेत्ययुर्विस्मयम् ॥ ६ ॥

पुरा त्रिपुररन्ध्रं विविधदैत्यविध्वंसनं पराक्रमपरम्परा अपि परा न ते विस्मयः ।
अमर्षिबलहर्षितक्षुभितवृत्तनेत्रोज्ज्वलज्ज्वलज्ज्वलनहेलया शलभितं हि लोकत्रयम् ॥ ७ ॥

सहस्रनयनो गुहः सहस्रहरश्मिर्विधुर्बृहस्पतिरुताप्पतिः ससुरसिद्धविद्याधराः ।
भवत्पदपरायणाः श्रियमिमां ययुः प्रार्थितां भवान् सुरतरुर्भृशं शिव शिवां शिवावल्लभ ॥ ८ ॥

तव प्रियतमादतिप्रियतमं सदैवान्तरं पयस्युपहितं भृतं स्वयमिव श्रियो वल्लभम् ।
विबुध्य लघुबुद्ध्यः स्वपरपक्षलक्ष्यायितं पठन्ति हि लुठन्ति ते शठहृदः शुचा शुण्ठिताः ॥ ९ ॥

निवासनिलयाचिता तव शिरस्ततिर्मालिका कपालमपि ते करे त्वमशिवोऽस्यनन्तर्धियाम् ।
तथापि भवतः पदं शिवशिवेत्यदो जल्पतां अकिञ्चन न किञ्चन वृजिनमस्ति भस्मीभवेत् ॥ १० ॥

त्वमेव किल कामधुक् सकलकाममापूरयन्सदा त्रिनयनो भवान्वहति चार्चिनेत्रोद्भवम् ।
विषं विषधरान्दधत्पिबसि तेन चानन्दवान्विरुद्धचरितोचिता जगदधीश ते भिक्षुता ॥ ११ ॥

नमः शिवशिवाशिवाशिवशिवार्थं कृन्ताशिवं नमो हरहराहराहरहरान्तरीं मे दशम् ।
नमो भवभवाभवप्रभवभूतये मे भवान् नमो मृड नमो नमो उमेश तुभ्यं नमः ॥ १२ ॥

सतां श्रवणपद्धतिं सरतु सन्नतोक्तेत्यसौ शिवस्य करुणाङ्कुरात्प्रतिकृतात्सदा सोचिता ।
इति प्रथितमानसो व्यधित नाम नारायणः शिवस्तुतिमिमां शिवं लिकुचिसूरिसूनुः सुधीः ॥ १३ ॥

इति श्रीमल्लिकुचिसूरिसूनुनारायणपण्डिताचार्यविरचिता शिवस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

१०. श्री पूर्णबोध स्तोत्र

॥ श्री पूर्णबोधस्तोत्रम् ॥

नलिनसौन्दर्यजिष्णुं पदाभ्यां ललितरूपाङ्गलीमङ्गलाभ्याम् ।
दलितनूत्रेन्दुमानं नखाल्या दलितशोणोपलालीकनाल्या ।
प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ १ ॥

अहिविहङ्गेशभूतेशपूर्वैरहमहंपूर्वमित्याप्तचित्तैः ।
मुहुरहोमांसनेत्रैरदृष्टैरिह समाजुष्टजङ्घाङ्घ्रिरेणुम् ।
प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ २ ॥

कनयमानं दधानं प्रकाशैः कनककौशेयमाशावकाशम् ।
जनमनोहारिवृत्तोरुकान्त्या जनितसंपर्कसंपद्विशेषम् ।
प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ ३ ॥

परदुरारोहमारोहयेद्यं पुरुषकाण्डप्रकाण्डो निजाङ्गम् ।
निरवधिस्नेहसन्दोह मन्दस्फुरितहासावलोकेन साकम् ।
प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ ४ ॥

सुवलिभंभद्रगंभीरनाभिं शिवमुदारोदरं मंलुमध्यम् ।
सुविपुलोरः स्थळं मानयन्ते कविजना यस्य सन्देहदेहम् ।
प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ ५ ॥

विकटसुस्तंभसं भावनीयं प्रकटमंभोजनाभोपभाजा ।
विकटविद्याविलासाङ्गणं धीस्फुटकनन्मण्टपं यस्य रम्यम् ।
प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ ६ ॥

भुजगभोगाभमुद्यम्य हृद्यं निजमुजं दक्षिणं लक्षणाढ्यम् ।
ललितमुद्रिक्तविज्ञानमुद्रं भज भजानन्तमित्यालपन्तम् ।
प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ ७ ॥

भवदवोष्णेन तातप्यमानान् भुवि परं ताथमप्रेक्षमाणान् ।
भुवनमान्येन चान्येन दोष्णा भवतु भीर्मेति नः सान्त्व यन्तम् ।
प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ ८ ॥

अधिगलं वानरो वन्यमालां विधिमुखोदारभूभारमालाम् ।
विधिविधात्राऽक्षमालां पुरा यो व्यधित लोकाततां कीर्तिमालाम् ।
प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ ९ ॥

मृदुतमं विभ्रमं बिभ्रदासीद्वदनमिन्दोः समं यस्य साक्षात् ।
 मदनमुद्दीपयेदिन्दुरेतन्मदसखं सन्दहेदेष भेदः ।
 प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ १० ॥
 विमुमुहुः सिंहनादेन दैत्याः प्रमुमुहुः सज्जनाः साधुवाण्या ।
 ममगुरोः पूर्वतन्वोरिदानीं सममिदं व्याख्यया यस्य जातम् ।
 प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ ११ ॥
 शिवमुखैरेकतो देववृन्दैः शुकमुखैऽन्यतः सन्मुनीन्द्रः ।
 शुकशुचिव्याख्यमस्राकुलाक्षैः शिरसि बद्धाञ्जलिं भक्तिहेतोः ।
 प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ १२ ॥
 तरुणहारावलीदन्तपङ्क्तिं शरणदं शारदाश्लाध्यवाचम् ।
 करुणया मन्दहासेन मन्दं शरणयातं जनं वीक्षमाणम् ।
 प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ १३ ॥
 रघुपवार्ण्यवासिष्ठरूपाः प्रभुमहाज्ञामनोज्ञावतंसाः ।
 त्रिवपुषाऽप्युत्तमेनोत्तमाङ्गं प्रविदधिरे येन चान्येन तुष्टाः ।
 प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ १४ ॥
 विधिभवेन्द्रादिदेवाधिनाथं कमलया सन्नतश्रीपदाञ्जम् ।
 कमलनाभं भजन्तं सुभक्त्या सुजनतुष्टिप्रदं वासुदेवम् ।
 प्रणतवान् प्राणिनां प्राणभूतं प्रणतिभिः प्रीणये पूर्णबोधम् ॥ १५ ॥

इति लिकुचान्वयकृतं पूर्णबोधस्तोत्रम् ॥

॥ श्रीभारतीरमणमुख्यप्राणान्तर्गत श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥

This document has been provided by Achyuta Bhakti Deets. Visit <https://bhaktideets.org> or <https://elib.bhaktideets.org> for more Shaastra related content.

श्री हरये नमः ।

श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥